पूर्वाञ्चल खेती

वर्ष : 33 दिसम्बर 2023 अंक : 12

प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वाञ्चल खेती

वर्ष 33 | दिसम्बर 2023 | अंक 12

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

अपर निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. के.एम. सिंह

वरिष्ठ प्रसार अधिकारी/सह प्राध्यापक

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

सम्पादक मण्डल

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

फूलों की व्यावसायिक खेती समय की मांग 01
अश्वनी कुमार सिंह एवं शैलेश कुमार सिंह

औषधीय गुणों से भरपूर सहजन 03
सोमेन्द्र नाथ एवं संजीत कुमार

पुनर्संचरण जल कृषि प्रणाली मे पंगेसियस पालन 04
ज्ञानदीप गुप्ता, पी0 के0 मिश्रा, ए0 एस0 वत्स, एम0 के0 सिंह

सब्जियों की पौध उत्पादन प्रौद्योगिकी 06
प्रमोद कुमार सिंह एवं अंकिता गौतम

समन्वित कृषि पद्धति कृषकों की आय संवर्धन का मुख्य आधार 09
विद्या सागर एवं डाँ राम जीत

जायद उर्द की उन्नत खेती 12
संजीत कुमार, सोमेन्द्र नाथ एवं आर0 आर0 सिंह

पर्यावरण प्रदूषण का पालतू पशुओं पर दुष्प्रभाव एवं उससे बचाव 15
एस. के. सिंह, शैलेन्द्र सिंह, एस. पी. सिंह, मनोज कुमार एवं शिवेंद्र प्रताप सिंह

कुक्कुट पक्षियों की बुरी आदतें, उनके कारण, निवारण एवं प्रबंधन 17
कबीर आलम' एवं सूर्य कान्त''

बैकयार्ड मुर्गीपालन द्वारा सतत ग्रामीण आजीविका 19
अमित कुमार सिंह, आर. के. सिंह एवं संदीप कुमार

केंचुआ स्नान (वर्मी वाश) : एक तरल जैविक खाद 22
सुरेन्द्र प्रताप सोनकर, सुरेश कुमार कन्नौजिया एवं राजीव कुमार सिंह

अधिक आय के लिए करें सूअर पालन 24
राहुल कुमार सिंह, श्रीप्रकाश सिंह एवं नरेन्द्र रघुबंशी

कम लागत प्राकृतिक खेती के आयाम 26
प्रवेश कुमार, शेष नारायण सिंह एवं ओम प्रकाश

सफलता की कहानी/आसिफ अजीज को जरबेरा ने किया मालामाल 29
विनय कुमार, राम भरोसे एवं के.एम. सिंह

दिसम्बर माह में किसान भाई क्या करें 30

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 31

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/ प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. एस.एन. सिंह	05498–258201	9450547719
3	बलिया	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
4.	फैजाबाद	डॉ. विनायक शाही	05278–254522	8755011086
5.	मऊ	डॉ. वी.के. सिंह	0547–2536240	8005362591
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	0541–2260595	9458362153
7.	बहराइच	डॉ. पी.के. सिंह	05252–236650	8858859244
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	–	9455501727
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओ.पी. वर्मा	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. शशिकान्त यादव	–	9415188020
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. पी.के. मिश्रा प्रभारी	–	9936645112
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. आर.के. सिंह	–	9452990600
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. विनय कुमार	–	–
25.	आजमगढ़ (लैदोरा)	डॉ. एल.सी. वर्मा	–	7376163318

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
2.	गोण्डा	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
3.	देवरिया	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
4.	गाजीपुर	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. महेन्द्र सिंह	9026289336	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. महेन्द्र सिंह	8787289358	0548–223690

डॉ. आर. आर. सिंह
अपर निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

विगत कुछ वर्षों में कृषि क्षेत्र बेहतर उत्पादकता हासिल करने के दौर से गुजर रहा था। इसी क्रम में किसानों तक ऐसी तकनीकियां प्रसारित करने का नीतिगत प्रयास भी किया गया, लेकिन इस बीच रसायनिक उर्वरकों व रसायनों के कारण हमारे खेतों की मिट्‌टी के स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ा जिससे वर्तमान में उत्पादकता व गुणवत्ता दोनों पर ही दुष्परिणाम देखने को मिले हैं। इन्हीं सन्दर्भों को ध्यान में रखकर पत्रिका के इस अंक में प्राकृतिक खेती, एकीकृत कृषि प्रणाली व फल फूल एवं सब्जियों की स्वस्थ नर्सरी उत्पादन के साथ–साथ पर्याप्त जैविक तत्वों की उपलब्धता की दृष्टि से विभिन्न पशु एवं पक्षियों के पालन की व्यावहारिक तकनीकी पर लेख प्रस्तुत है।

आशा है पत्रिका का यह अंक हमारे पाठकों, किसान भाइयों पशुपालकों व प्रसार कार्यकर्ताओं के लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

(आर.आर. सिंह)

फूलों की व्यावसायिक खेती समय की मांग

अश्वनी कुमार सिंह* एवं शैलेश कुमार सिंह**

अयोध्या में श्री राम जन्मभूमि मंदिर के निर्माण से इस क्षेत्र में पुष्प व्यवसाय में घातीय वृद्धि होने का अनुमान है।

पुष्प व्यवसाय में गेंदा का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इसका धार्मिक तथा सामाजिक अवसरों पर बृहत् रूप में व्यवहार होता है। गेंदा फूल को पूजा अर्चना के अलावा शादी–ब्याह, जन्म दिन, सरकारी एवं निजी संस्थानों में आयोजित विभिन्न समारोहों के अवसर पर पंडाल, मंडप–द्वार तथा गाड़ी, सेज आदि सजाने एवं अतिथियों के स्वागतार्थ माला, बुके, फूलदान सजाने में भी इसका प्रयोग किया जाता है।

गेंदा के औषधीय गुण

अपने औषधीय गुणों के कारण गेंदा का एक खास महत्व है।

- कान दर्द में गेंदा के हरी पत्ती का रस कान में डालने पर दर्द दूर हो जाता है। खुजली, दिनाय तथा फोड़ा में हरी पत्ती का रस लगाने पर रोगाणु रोधी का काम करती है। अपरस की बीमारी में हरी पत्ती का रस लगाने से लाभ होता है। अन्दरूनी चोट या मोच में गेंदा के हरी पत्ती के रस से मालिश करने पर लाभ होता है।
- साधारण कटने पर पत्तियों को मसलकर लगाने से खून का बहना बन्द हो जाता है।
- फूलों का अर्क निकाल कर सेवन करने से खून शुद्ध होता है।
- ताजे फूलों का रस खूनी बवासीर के लिए भी बहुत उपयोगी होता है।

गेंदा की खेती के लिए भूमि

गेंदा की खेती के लिए दोमट, मटियार दोमट एवं बलुआर दोमट भूमि सर्वोत्तम होती है, जिसमें उचित जल निकास की व्यवस्था हो।

भूमि की तैयारी

भूमि को समतल करने के बाद एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 बार देशी हल या कल्टीवेटर से जुताई करके एवं पाटा चलाकर, मिट्टी को भुरभुरा बनाने एवं कंकर पत्थर आदि को चुनकर बाहर निकाल दें तथा सुविधानुसार उचित आकार की क्यारियाँ बना दें।

व्यवसायिक किस्में

अधिक ऊपज फलने के लिए परम्परागत किस्मों की जगह केवल सुधरी किस्में ही बोनी चाहिए। गेंदा की कुछ प्रमुख उन्नत किस्में निम्न हैं –

1. अफ्रीकन गेंदा

इसके पौधे अनेक शाखाओं से युक्त लगभग 1 मीटर तक ऊँचे होते हैं, इनके फूल गोलाकार, बहुगुणी पंखुड़ियों वाले तथा पीले व नारंगी रंग का होता है। बड़े आकार के फूलों का व्यास 7–8 सेमी. होता है। इसमें कुछ बौनी किस्में भी होती हैं, जिनकी ऊँचाई सामान्यतः 20 सेमी. तक होती है। अफ्रिकन गेंदा के अन्तर्गत व्यवसायिक दृष्टिकोण से उगाये जाने वाले प्रभेद–पूसा नारंगी, पूसा बसन्ती अफ्रिकन येलो इत्यादि है।

2. फ्रांसीसी गेंदा

इस प्रजाति की ऊँचाई लगभग 25–30 सेमी. तक होती है, इसमें अधिक शाखायें नहीं होती हैं किन्तु इसमें इतने अधिक पुष्प आते हैं कि पूरा का पूरा पौधा ही पुष्पों से ढँक जाता है। इस प्रजाति के कुछ उन्नत किस्मों में रेड ब्रोकेट, कपिड येलो, बोलेरो, बटन स्कोच

*वि.व.वि. (उद्यान), **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र बाराबंकी

इत्यादि है।

खाद एवं उर्वरक

गेंदा की अच्छी ऊपज लेनी है तो खेत की तैयारी से पहले 200 क्विंटल कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिला दें। तत्पश्चात 120–160 किलो नेत्रजन, 60–80 किलो फास्फोरस एवं 60–80 किलोग्राम पोटाश का प्रयोग प्रति हेक्टेयर की दर से करें। नेत्रजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा खेत की अन्तिम जुताई के समय मिट्टी में मिला दें। नत्रजन की शेष आधी मात्रा पौधा रोपन के 30–40 दिन के अन्दर प्रयोग करें।

गेंदा का प्रसारण

गेंदा का प्रसारण बीज एवं कटिंग दोनों विधि से होता है इसके लिए 300–400 ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है, जो 500 वर्ग मीटर के बीज शैय्या में तैयार किया जाता है, बीज शैय्या में बीज की गहराई 1 सेमी. से अधिक नहीं होना चाहिए। जब कटिंग द्वारा गेंदा का प्रसारण किया जाता है तो उसमें ध्यान रखना चाहिए कि हमेशा कटिंग नये स्वस्थ पौधे से लें, जिसमें मात्र 1–2 फूल खिला हो, कटिंग का आकार 4 इंच (10 सेमी) लम्बा होना चाहिए। इस कटिंग पर रूटेक्स लगाकर बालू से भरे ट्रे में लगाना चाहिए। 20–22 दिन बाद इसे खेत में रोपाई करना चाहिए। रोपाई : गेंदा फूल खरीफ, रबी, जायद तीनों सीजन में बाजार की मांग के अनुसार उगाया जाता है। लेकिन इसके लगाने का उपयुक्त समय सितम्बर–अक्टूबर है। विभिन्न मौसम में अलग–अलग दूरी पर गेंदा लगाया जाता है जो निम्न है

खरीफ (जून से जुलाई) – 60 x 45 सेमी.

रबी (सितम्बर से अक्टूबर) – 45 x 45 सेमी.

जायद (फरवरी से मार्च) – 45 x 30 सेमी.

सिंचाई

खेत की नमी को देखते हुए 5–10 दिनों के अन्तराल पर गेंदा में सिंचाई करनी चाहिए। यदि वर्षा हो जाय तो सिंचाई नहीं करना चाहिए।

पिंचिंग

रोपाई के 30–40 दिन के अन्दर पौधे की मुख्य शाकीय कली को तोड़ देना चाहिए। इस क्रिया से यद्यपि फूल थोड़ा देर से आयेंगे, परन्तु प्रति पौधा फूल की संख्या एवं ऊपज में वृद्धि होती है। निकाई–गुड़ाई लगभग 15–20 दिन पर आवश्यकतानुसार निकाई–गुड़ाई करनी चाहिए। इससे भूमि में हवा का संचार ठीक से होता है एवं वांछित खरपतवार नष्ट हो जाते हैं। रोपाई के 60 से 70 दिन पर गेंदा में फूल आता है, जो 90 से 100 दिनों तक आता रहता है। अतः फूल की तोड़ाई साधारणतया सायंकाल में की जाती है। फूल को थोड़ा डंठल के साथ तोड़ना श्रेयस्कर होता है। फूल का कार्टून जिसमें चारों तरफ एवं नीचे में अखबार फैलाकर रखना चाहिए एवं ऊपर से फिर अखबार से ढँक कर कार्टून बन्द करना चाहिए।

कीड़े और बीमारी

लीफ हापर, रेड स्पाइडर, इसे काफी नुकसान पहुँचाते हैं। इसके रोकथाम के लिए मैलाथियान 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करें।

गेंदा में मोजेक, चूर्णी फफूद एवं फूटराट मुख्य रूप से लगता है। मोजेक लगे पौधे को उखाड़कर मिट्टी तले दबा दें एवं गेंदा में इमिडाक्लोप्रिड–2 मिली/लीटर पानी या ऐसीराम्प्रिड 2 ग्राम/लीटर पानी घोल बनाकर कीटनाशक दवा का छिड़काव करें जिससे मोजेक के विषाणु स्थानान्तरित करने वाले कीट का नियंत्रण हो इसका विस्तार एवं दूसरे पौधे में न हो। चूर्णी फफूद के नियंत्रण है तो 0.2 प्रतिशत गंधक का छिड़काव करें एवं फुटराट के नियंत्रण है तो इण्डोफिल एम–45 0.25 प्रतिशत का 2–3 बार छिड़काव करें।

औषधीय गुणों से भरपूर सहजन

सोमेन्द्र नाथ* एवं संजीत कुमार**

सहजन मानव जीवन के लिए प्रकृति का वरदान है। पोषक तत्वों की उपलब्धता के आधार पर सहजन विश्व की महत्वपूर्ण सब्जियों में एक है। इस वृक्षीय सब्जी के फल, फूल व पत्तियाँ सभी उपयोगी हैं, जिनमें खनिज तत्व, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन, रेशा एवं लौह तत्व पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। इसमें पाया जाने वाला जिंक, खून की कमी पूरी करने में सहायक है। सहजन में ओलिक एसिड, जो एक प्रकार का मोनो सैचुरेटेड फैट है, अधिक मात्रा में पाया जाता है जो शरीर के लिए आवश्यक है। इसमें पाया जाने वाला विटामिन 'सी', शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर रोगों से लड़ने की शक्ति प्रदान करता है। इसमें कुपोषण दूर करने की अद्भुत क्षमता है। गर्भवती एवं दूध पिलाने वाली माताओं के लिए सहजन का उपभोग बहुत लाभप्रद है। इसकी उपयोगिता इस तथ्य से स्पष्ट है कि केवल एक चम्मच सहजन के पत्तियों का चूर्ण 1–4 वर्ष के बच्चों को प्रतिदिन भोजन में देने से 15 प्रतिशत प्रोटीन, 40 प्रतिशत कैल्शियम, 25 प्रतिशत लौह तत्व तथा 90 प्रतिशत विटामिन 'ए' की आपूर्ति सुगमता से की जा सकती है। सहजन की खेती विशेषकर ग्रामीण अंचल में जहाँ पर ज्यादातर महिलाएँ एवं बच्चे कुपोषण के शिकार हैं, इसका उपयोग लाभप्रद है। सहजन गर्म, अर्द्ध–शुष्क एवं नम जलवायु में आसानी से उगाया जा सकता है। इसके लिए उपयुक्त तापमान 25–30 डिग्री सेन्टीग्रेड है। सहजन कम तापमान के प्रति बहुत संवेदनशील होता है। सहजन के उपयोग का वर्णन निम्नवत है:

- सहजन की पत्तियों में आयरन, रेशा, विटामिन 'ए' एवं प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। अतः पत्ती को सुखाने के उपरान्त पाउडर बनाकर उसे फलों एवं सब्जियों के पौष्टिक जूस के साथ प्रयोग करें।
- सहजन की पत्तियों के पाउडर को सलाद में नमक व सलाद मसाला के साथ प्रयोग करें।
- सहजन की पत्तियों एवं फलियों के सत् को निकालकर विभिन्न फलों में मिलाकर दूसरे उत्पाद बनाना जा सकता है।
- सहजन की फलियों का सांभर एवं सब्जी के रूप में प्रयोग करना उत्तम होता है।
- सहजन की फलियों का पाउडर बनाकर उपयोग किया जाता है।
- सहजन की पत्तियों को जूस के रूप में प्रयोग करना अब सामान्य बात हो गयी है।
- सहजन की फूल की सब्जी ज्यादा स्वादिष्ट होती है।

औषधीय गुण

बीजों का औषधीय गुण

- सहजन के बीज को पाउडर के रूप में पीस कर पानी में मिलाया जाता है। पानी के साथ घुलकर यह एक प्रभावी नेचुरल क्लोरीफिकेशन एजेन्ट बन जाता है। यह न सिर्फ पानी को बैक्टीरिया रहित करता है, बल्कि पानी की सान्द्रता को भी बढ़ाता है, जिससे यह जल मानवीय उपयोग के लिए अधिक गुणकारी बन जाता है।

पत्तियों का औषधीय गुण

सहजन की पत्तियों में कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, आयरन, कैल्शियम , पोटशियम मैग्नीशियम, विटामिन 'ए', 'सी' और बी काम्प्लेक्स प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जो खून की कमी एवं कुपोषण को दूर करने में सहायक है। इसके अलावा पत्तियों में निम्न औशधीय गुण पाये जाते हैं:

1. सहजन में शुगर के स्तर को संतुलित रखने की क्षमता होती है। यह मधुमेह (डायबिटीज) रोग से लड़ने में मदद करता है।
2. उपापचय को ठीक रखने के लिए सहजन के पत्तियों का सेवन बेहतर पाया गया है। यह पाचन क्रिया को सही रखने में सहायक होता है।
3. सहजन की पत्तियों का काढ़ा सामान्यतौर पर गठिया, सियाटिका, पक्षाघात एवं वायु विकार में शीघ्र लाभ देता है।
4. सहजन की पत्तियों को पीसकर लगाने से घाव एवं सूजन ठीक हो जाता है।

(शेष पृष्ठ 11 पर)

*वि.व.वि. सस्य, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, सोहाँव बलिया, आ.न.दे.कृ. एवं प्रौ. वि. कुमारगंज, अयोध्या

पुनर्संचरण जल कृषि प्रणाली मे पंगेसियस पालन

ज्ञानदीप गुप्ता*, पी0 के0 मिश्रा**, ए0 एस0 वत्स***, एम0 के0 सिंह****

पुनर्संचरण जलकृषि प्रणाली मछली की खेती की एक तकनीक है जिसमें एक बार उपयोग में लाये गए पानी का पुनः उपयोग उसी इकाई में जलकृषि के लिए किया जाता है। पानी के पुनः उपयोग के लिए जलकृषि टैंकों से आने वाले अशुद्ध जल को शुद्ध करने के लिए यांत्रिक और जैविक फिल्टर की स्थापना की आवश्यकता होती है। यह मछली पालन का एक गहन तरीका है, जिसमें मछली बहुत अधिक घनत्व में पाली जाती है और विशेष रूप से तैयार किए गए खाद्य पर निर्भर रहती है। पुनर्संचरण जलकृषि किसान को उत्पादन के सभी मापदंडो को पूरी तरह से नियंत्रित करने की क्षमता प्रदान करता है। पानी के तापमान, ऑक्सीजन के स्तर या दैनिक प्रकाश की तीव्रता जैसे मापदंडों के नियंत्रण के कारण स्थिर और उपयुक्त वातावरण प्रदान करता है, जो मछलियों के बेहतर विकास का कारण बनता है। इस सुविधा का प्रमुख लाभ यह है कि एक सटीक उत्पादन योजना तैयार की जा सकती है और मछली की बिक्री के लिए सटीक समय की भविष्यवाणी की जा सकती है। यह प्रणाली मछली पालन के समग्र प्रबंधन में मददगार है और प्रतिस्पर्धात्मक बिक्री में किसानों को मजबूत करता है। जल पुनर्संचरण प्रणाली में रोग जनकों का प्रभाव बहुत कम हो जाता है क्योंकि पानी के सीमित उपयोग से बाहरी पर्यावरण से आने वाली आक्रामक बीमारियाँ कम से कम हो जाती हैं। कम पानी की आवश्यकता, प्रदूषकों का उचित निवारण और रोग जनकों की निकासी में रूकावट के कारण यह प्रणाली पर्यावरण के अनुकूल है।

दुनिया भर में मछलियों की भारी मांग को पूरा करने के लिए पुनर्संचरण जलकृषि एक नई एवं प्रभावी तकनीक मानी जाती है। इसमें पारंपरिक तालाब आधारित जलकृषि की तुलना में बहुत अधिक घनत्व में मछलियों को संग्रहित किया जाता है। इसके कारण कम कृषि क्षेत्र का उपयोग करते हुए भी उच्च उत्पादन लिया जाता है। नीली क्रांति योजना के अंतर्गत किसानों की आय दोगुनी करने के लिए इस तकनीक पर उचित ध्यान देने की आवश्यकता है। भारतीय परिदृष्य में मीठा पानी आधारित रिसर्कुलेटरी एक्वाकल्चर सिस्टम प्रणाली के लिए दो मत्स्य प्रजातियों की सिफारिश की जाती है जो पंगेसियस और तिलापिया हैं। दोनों प्रजातियाँ प्रकृति में कठोर, सीमित जगहों में रहने योग्य और कम प्रोटीनयुक्त खाद्य स्वीकार करने की क्षमता के साथ–साथ उचित बाजार मांग भी रखती है।

आवश्यकतायें–

- प्रदूषण मुक्त जलस्त्रोत।
- बिजली की आपूर्ति और सड़क संपर्क।
- चोरी और अन्य सामाजिक दोषों से मुक्त कार्य क्षेत्र।
- पारम्परिक पुनर्संचरण जलकृषि प्रणाली का तकनीकी ज्ञान।

आरएएस प्रणाली के घटक–

एनएफडीबी के दिशा निर्देशों के अनुसार, उत्पादन क्षमता 40 टन/फसल के लिए 8 टैंकों वाले एक मध्यम पैमाने की पंगेसियस पालन की आरएएस प्रणाली यहाँ वर्णित है। एक टैंक के लिए 7.65 X 7.65 X 1.5 मीटर के आयाम के साथ 8 सीमेंटेड टैंकों से बनी एक आरएएस इकाई का उपयोग किया जाता है। गुरूत्वाकर्षण द्वारा जल निकासी की सुविधा के लिए टैंकों का निर्माण जमीन के ऊपर किया जाना चाहिए।

जलस्रोत–

पानी की दैनिक हानि की आपूर्ति करने के लिए 3'' क्षमता वाले नलकूप की आवश्यकता होती है। प्रवेश द्वार के माध्यम से प्रत्येक टैंक में पानी की आपूर्ति की जाती है और निकास द्वार के माध्यम से हटा दिया जाता है। गुरूत्वाकार्षण द्वारा जल निकासी की सुविधा के लिए निकास द्वार की ऊँचाई टैंक के तल से कम होनी चाहिए। टैंकों के निकास द्वार से निकलने वाले जल को जल शुद्धिकरण टैंको में भेजा जाता है।

तापमान नियंत्रण–

ठंडे मौसम में उपयुक्त तापमान बनाए रखने के लिए

*वि.व.वि., मत्स्य, **वि.व.वि., वानिकी, ***वि.व.वि.,पादप सुरक्षा, ****वि.व.वि., उद्यान, मनकापुर, गोण्डा।।

इकाई को एक पॉली हाउस के भीतर बनाया जाता है।

वायु संचरण–

यह एयर पप और एयर स्टोन के माध्यम से किया जा सकता है।

जल शुद्धिकरण प्रणाली

जल शुद्धिकरण प्रणाली के लिए सेटलिंग टैंक और धीमी गति के रेत फिल्टर का उपयोग किया जाता है। धीमी गति का रेत फिल्टर जैविक फिल्टर का भी कार्य करता है। फिल्टर आरएएस के प्रमुख घटक हैं, क्योंकि पानी के पुनर्संचरण की मात्रा सीधे फिल्टर के कार्यक्षमता पर निर्भर करती है। निकास द्वार से आने वाले पानी में बचे हुए खाद्य और मछलियों के द्वारा उत्सर्जित पदार्थों के रूप में अत्यधिक मात्रा में अशुद्धियाँ रहती हैं। इन अशुद्धियों के कारण अमोनिया और हाइड्रोजन सल्फाइड जैसे हानिकारक गैसों की उत्पत्ति होती है। उच्च घनत्व में संचयन के कारण अन्य आवश्यक जल गुण भी उपयुक्त स्तर से बदल जाते हैं। शुद्धिकरण प्रणाली इन अशुद्धियों को दूर करती है और मत्स्य पालन के लिए उपयुक्त जल गुणवत्ता को बनाए रखती है। निकास द्वार से आने वाले पानी में पाए जाने वाले बड़े आकार के ठोस कणों को निकालने के लिए सर्वप्रथम सेटलिंग टैंकों में संग्रहित किया जाता है। इस प्रक्रिया में तल में जमा हुई सामग्री को स्लज कहा जाता है, जिसे समय–समय पर पंप के माध्यम से निकाल दिया जाता है। इस प्रक्रिया के बाद शेष बचे छोटे आकार के ठोस और घुलनशील अशुद्धियों को हटाने के लिए धीमी गति के रेत फिल्टर का उपयोग किया जाता है। यह जैविक फिल्टर के रूप में भी कार्य करता है। यह हानिकारक जैविक अशुद्धियों को दूर करता है और पानी को पुनः उपयोग के योग्य बनाता है। इकाई के लिए पर्याप्त फिल्टर का आयाम 10 x 3 x 1.5 मीटर है। फिल्ट्रेशन की सतह विभिन्न आकार के रेत की परतों से बनी होती है। रेत फिल्टर से आने वाला पानी सभी अशुद्धियों से मुक्त होता है और जलकृषि में पुनः उपयोग के लिए उपयुक्त होता है। संचयन दर और सवंर्धित प्रजातियों के आधार पर कभी–कभी ऑक्सीजन प्रवाह, पीएच परिवर्तन और रोगाणुनाशकों की भी आवश्यकता होती है।

आरएएस में पंगेसियस पालन की तकनीक–

संचयन दर 50–100 संख्या/घन मीटर के साथ 14–20 ग्राम पंगेसियस अंगुलिकाओं को मृदुजल के आरएएस में पाला जा सकता है। पंगेसियस 28 प्रतिशत प्रोटीन वाले खुराक दिए जाने पर 6 महीने में लगभग 1 किलो तक बढ़ती है। मछली को शरीर के वजन का 2.5 प्रतिशत की दर से खुराक दिया जाता है। उपर्युक्त विधि से पाले जाने पर आहार रूपांतरण दर मान 1.5 प्राप्त किया जा सकता है। उपरोक्त संचयन दर के साथ 8 टैंक आरएएस इकाई से लगभग 40 टन/फसल का उत्पादन लिया जा सकता है।

आरएएस की सीमाएँ–

- इसमें उच्च प्रारंभिक निवेश की आवश्यकता होती है।
- यह तकनीकी रूप से चुनौतीपूर्ण है और पारंपरिक जल कृषि की तुलना में अधिक तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है।
- इसे निरंतर बिजली की आपूर्ति की आवश्यकता होती है जिसकी उपलब्धता ग्रामीण क्षेत्रों में सीमित हो सकती है।

पंगेसियस पालन के लिए महत्वपूर्ण जल गुणवत्ता मानक

गुणवत्ता मानक	आवश्यक मात्रा
तापमान	25–30 डिग्री सेल्सियस
घुलित ऑक्सीजन	> 0.1 मिलीग्राम/लीटर
पीएच	7.5 – 8.0
कुल अमोनिया नाइट्रोजन	< 0.5 मिलीग्राम/लीटर
हाइड्रोजन सल्फाइड	अनुपस्थित
आर्थिक व्यवस्था	
डिजाइन मापदण्ड	
उत्पादन क्षमता	42 टन
प्रति टैंक क्षमता	82 घनमीटर
टैंकों की संख्या	8
खर्च और लाभ	
कुल उत्पादन लागत	रू. 30,00,000
कुल बिक्री	रू. 40,00,000
लाभ	रू. 10,00,000

सब्जियों की पौध उत्पादन प्रौद्योगिकी

प्रमोद कुमार सिंह* एवं अंकिता गौतम**

ग्रीन हाउस सब्जी की नर्सरी नव पौध को उगाने व संभाल कर रखने का स्थान है जब तक कि यह पौध और अधिक स्थायी रूप से रोपाई के लिए तैयार नहीं हो जाती है। वर्तमान समय में गुणवत्ता एवं अधिकता पर अधिक ध्यान दिया जा रहा हैं एवं दोनों का होना अति आवश्यक है ऐसे में जब पौधों को नियंत्रित वातावरण में तैयार किया जाय इसके लिए संरक्षित पौधशाला (ग्रीनहाउस नर्सरी) ही एक मात्र उपाय है। ग्रीनहाउस के अन्दर सब्जियों की पौध तैयार करना सुरक्षित हल है

नर्सरी में परिस्थिति का नियंत्रण

पर्यावरण नियंत्रण प्रणाली वे विभिन्न प्रकार की नियंत्रण प्रणालियां हैं जिनका उपयोग तापमान को नियंत्रित करने (अर्थात् ऊष्मन शीतलन और अन्य नियंत्रणों) के लिए किया जाता है। इसमें निम्न आते हैं

1. **शीतलनः** वाष्पन शीतलन प्रणाली को ग्रीन हाउस की दीवार के साथ स्थापित किया जा सकता है, ताकि शुष्क अवधि में तापमान को कम किया जा सके तथा यदि आवश्यक हो तो आर्द्रता बढ़ाई जा सके। यह प्रणाली तापमान/आर्द्रता/समय के अनुसार स्वचालित होती है।
2. **बिजली का पंखाः** जलवायु नियंत्रण के साथ–साथ रोग से बचाव के लिए प्रतिस्थापन क्षमता तथा शीतलन परिचालन से युक्त वायु विस्थापन की व्यवस्था। स्थिति में किसी भी प्रकार के परिवर्तन के लिए पंखों को तापमान और आर्द्रता प्राचलों के अनुसार चार अवस्थाओं में धीरे–धीरे चलाया जाता है।
3. **वायु मिश्रणः** इनका उपयोग वायु को गति प्रदान करने के लिए किया जाता है, ताकि रोगों से बचाव हो सके और समरूप पर्यावरण सृजित हो सके। उच्च आर्द्रता तथा तापमान के साथ–साथ रसायनों के विरुद्ध वायु प्रतिरोध।
4. **सैंसरः** मॉनिटर तथा कंट्रोल से युक्त एक पूर्णतः समेकित कम्प्यूटर नेटवर्ग हमारे ग्रीन हाउस के लिए आवश्यक है तथा जलवायु नियंत्रण के लिए इंडोर सैंसर लगाए जाते हैं जिनसे तापमान व आर्द्रता का नियंत्रण होता है जबकि बाहरी तापमान, आर्द्रता, पवन की गति तथा पवन की दिशाओं के लिए बाहरी सैंसर लगाए जाते हैं।
5. सिंचाई तथा फर्टिगेशन इकाई ग्रीन हाउस नर्सरी का एक महत्वपूर्ण पहलू सिंचाई/फर्टिगेशन प्रणाली है।

नर्सरी पौध से लाभ

- अनुकूल वृद्धि स्थितियां अर्थात् अंकुरण तथा वृद्धि हेतु अनुकूल दशाएं उपलब्ध कराना संभव।
- नव पौधों की बेहतर देखभाल हो सकती है क्योंकि छोटे क्षेत्र में रोगजनकों के संक्रमण, नाशकजीवों और खरपतवारों की नर्सरी में देखभाल करना आसान होता है।
- नर्सरी उगाकर प्राप्त की गई फसल काफी अगेती होती है और इसकी उपज का बाजार में उच्चतर मूल्य प्राप्त होता है। इस प्रकार यह आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभदायक है।
- भूमि तथा श्रम की बचत होती है, क्योंकि मुख्य खेतों में एक माह के पश्चात् फसलें उगती हैं। इसके द्वारा अधिक गहन फसल क्रमों को अपनाया जा सकता है।
- चूंकि नर्सरी अलग से उगाई जाती है, अतः मुख्य खेत को तैयार करने के लिए अधिक समय उपलब्ध हो जाता है।
- चूंकि सब्जियों के बीज, विशेषकर संकर बीज बहुत महंगे होते हैं इसलिए हम इन बीजों को नर्सरी में उगाकर धन की बहुत बचत कर सकते हैं।
- नर्सरी अंततः बागवानी की मौलिक आवश्यकता है। पादप प्रवर्धन की तकनीकें व विधियां बागवानी नर्सरी का मूल तत्व हैं। बागवानी फसलों की रोपाई के लिए रोपण सामग्री बीजों तथा वानस्पतिक भागों से उगाई जाती है।
- रोपण सामग्री की नर्सरी रोपण मौसम के आरंभ में उपलब्ध होती है। इससे पौध उगाने के लिए किसानों के समय, धन व प्रयासों की बचत होती है।

पौधाशाला के प्रकार

फलदार पौधों की पौधाशालाः प्रवर्धन तथा

*एस.एम.एस.(उद्यान) कृषि विज्ञान केन्द, महराजगंज, **शोध छात्रा, डा0 भीम राव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ

रखरखाव के लिए विशेष तकनीकें। आम, अमरूद, अनार, चीकू, संतरे आदि वानस्पतिक विधियों से प्रवर्धित किए जाते हैं। कलमों के उत्पादन तथा स्कियॉन और मूलवृंत के मातृ पौधों के उत्पादन के लिए फल नर्सरियों का होना अनिवार्य है।

सब्जी की पौधाशाला : आलू, शकरकंद, बल्बदार सब्जियों तथा कुछ अन्य सब्जियों को छोड़कर सभी सब्जियां पौध द्वारा उगाई जाती हैं। कुछ बहुवर्षीय सब्जियों जैसे लिटल गार्ड, सहजन, एलोकेशिया आदि की पौधें अल्प अवधि में बड़े पैमाने पर तैयार की जाती है।

अलंकृत पौधों की पौधाशाला : अलंकारिक तथा पुष्पीय फसलें अनेक प्रकार की हैं और इन्हें वानस्पतिक रूप से प्रवर्धित किया जाता है। इनमें से प्रमुख हैं ग्लेडियोलस, कार्नेशन, गुलाब, लीली आदि। अलंकारिक पौधों का ऐसा बड़ा समूह भी है जो बीजों और पौध द्वारा प्रवर्धित किया जाता है, जैसे – एस्टर, गेंदा, सेल्विया आदि।

औषधीय तथा सगधमय पौधों की पौधाशाला : परिवर्तित होती हुई जीवनशैली के कारण लोग आयुर्वेदिक औषधियों को बड़े पैमाने पर अपनाने लगे हैं। इसके अतिरिक्त तेजी से घटते जा रहे बहुमूल्य औषधीय तथा सगंधित पौधों को संरक्षित करना भी आवश्यक है। बहुमूल्य औषधीय तथा अन्य पवित्र पौधों को बचाने और उन्हें प्रगुणित करने के लिए इन पौधों से युक्त नर्सरियों का विकास होना आरंभ हो गया है। इन पौधों की आयुर्वेद के चिकित्सकों द्वारा भी बहुत मांग की जाती है।

हाई–टैक पौधाशाला : कुछ वाणिज्यिक पौधों की मांग अचानक तेजी से बढ़ी है। उदाहरण के लिए ऊतक संवर्धन द्वारा उगाए गए केले, जरबेरा, कार्नेशन आदि की मांग हाल ही में बहुत बढ़ गई है। सामान्य या साधारण नर्सरी विधियों द्वारा इस आवश्यकता को पूरा करना संभव नहीं है। मांग को पूरा करने के लिए विशेष तकनीकों और विधियों की आवश्यकता है तथा केवल हाई–टेक नर्सरी से ही इस प्रकार की मांग को पूरा किया जा सकता है। ये नर्सरियां ग्रीन हाउस में पौधे उगाने के लिए तैयार की जाती हैं जो कांच या प्लास्टिक की बनी सुरंग होती हैं और जिनका निर्माण नव पौधों को कठोर मौसम से बचाने तथा उन तक प्रकाश और हवा पहुंचने के लिए उचित डिज़ाइन तैयार करके किया जाता है। आधुनिक ग्रीनहाउस में तापमान, वातायन, प्रकाश, सिंचाई जल देने तथा पौधों को भोजन उपलब्ध कराने की स्वचालित नियंत्रण वाली व्यवस्था होती है। कुछ नर्सरियों में खुल जाने वाली छतें भी होती हैं जिनके कारण पौधों को मनुष्यों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती है तथा वे उसी स्थान पर सबल या पुष्ट हो जाते हैं।

पौध तैयार करने में प्रयोग होने वाली आवश्यक सामग्री

ग्रीन हाउस नर्सरी में सब्जियों की पौध दो प्रकार के प्लास्टिक प्रो–ट्रे (प्लास्टिक की खानेदार ट्रे) में तैयार की जाती है। एक प्रो–ट्रे में छेदों का आकार 1.0 इंच (10 घन सें.मी.) व खानों की संख्या कुल 325 से 350 तक हो सकती है तथा इसमें शिमला मिर्च, फूलगोभी, पत्तागोभी, गांठगोभी, ब्रोकली, मिर्च, सलाद व टी.पी. एस. आलू की पौध तैयार की जाती है। दूसरी प्लास्टिक ट्रे में छेदों का आकार 1.5 इंच (20 घन सें. मी.) होता है तथा एक ट्रे में कुल 180 से 200 खाने हो सकते हैं। इसमें टमाटर, बैंगन, खीरा, खरबूजा, तरबूज, लौकी, तोरई, छप्पन कद्दू आदि की पौध तैयार की जाती है। पहले इन ट्रेज को थर्माकोल के ढांचे में रखा जाता है जो कि ट्रेज के छेदों के आकार के अनुसार ही होते हैं। आजकल भारतीय बाजारों में 98 छेदों वाली प्लास्टिक ट्रेज आसानी से मिल रही है जिनका उपयोग पौध उगाने में किया जा सकता है।

अब इन ट्रेज में कोकोपीट, परलाइट व वर्मीकुलाइट का 3:1:1 अनुपात का मिश्रण (आयतन के आधार पर) तैयार करके भरा जाता है। ये तीनों माध्यम पूर्णतः रोगाणुरहित होते हैं। अब खानेदार ट्रे के प्रत्येक छेद में एक ही बीज बोया जाता है तथा बाद में बीज के ऊपर वर्मीकुलाइट की एक पतली पर्त डाली जाती है।

पौधाशाला के लिए बाजार क्षमता सर्वेक्षण

1. राज्य कृषि विभागों, चिकित्सा मंडलों आदि द्वारा प्रायोजित बागवानी बोर्ड के विकास कार्यक्रमों के अंतर्गत नर्सरियों में पौधे गृह वाटिकाओं, भू–दृश्य निर्माण, वनीकरण तथा अन्य उपयोगों के लिए उत्पन्न किए जाते हैं। यह पहले से निर्णय लिया जाना चाहिए कि नर्सरी में किस प्रकार के पौधे तैयार किए जाने हैं और उन्हें कैसे तैयार करना है, जैसे उन्हें पात्रों में उगाना है, जड़ों को खुला रखना है या जड़ों को मिट्टी के गोलों के अंदर उगाना है आदि।

2. उपभोक्ता की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए श्रेष्ठ गुणवत्ता वाली सामग्री का पर्याप्त मात्रा में उत्पादन करना आवश्यक है। जहां एक ओर आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने से पूरा माल बिकने से रह जाता है, जिससे नर्सरी को हानि उठानी पड़ सकती है, वहीं दूसरी ओर कम उत्पादन करने से उपभोक्ताओं की मांग पूरी नहीं हो पाती है।
3. विज्ञापन करना यद्यपि महंगा है, लेकिन बागवानी नर्सरी व्यापार के लिए यह अत्यधिक प्रभावी है। परस्पर एक दूसरे को सहायता पहुंचाने तथा व्यापार करने के लिए विपणन तथा विज्ञापन संबंधी कार्यनीतियों की योजना पहले से ही तैयार कर ली जानी चाहिए।

रोग एवं कीट नियंत्रण

कीट नियन्त्रण : यद्यपि नर्सरी में अनेक कीट आक्रमण करते हैं लेकिन पांच मुख्य कीट ऐसे हैं जो सामान्य रूप से नर्सरी में आक्रमण करते हैं :

लीफ माइनर : यह बहुत छोटा कीट है जो पत्तियों में उनकी कोर के छोर से प्रवेश करता है तथा क्लोराफिल को खाते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान तक घूमता रहता है। पत्तियों का संक्रमित भाग भूरा पड़ जाता है और बाद में सूख जाता है। इस कीट के नियंत्रण के लिए सिस्टेमिक कीटनाशी का उपयोग किया जाना चाहिए।

लॉपर वर्म : यह कीट मुख्यतः कोल फसलों पर आक्रमण करता है, उनकी पत्तियों में छेद बनाता है और जिससे पौधा पीला पड़ जाता है, उसकी वृद्धि रूक जाती है और उससे कोई भी उपज प्राप्त नहीं होती है। इस कीट को नियंत्रित करने के लिए इण्डाक्साकार्ब 1 मि.ली./ली की दर से छिड़काव करें।

हॉर्न वर्म : यह कीट मुख्यतः टमाटर, बैंगन आदि फसलों पर आक्रमण करता है तथा पत्तियों व तने को क्षतिग्रस्त करने के पश्चात् पूरे पर्ण चक्र को क्षति पहुंचाता है। इसे नियंत्रित करने के लिए इण्डाक्साकार्ब 1 मि.ली./ली की दर से छिड़काव करें।

माहू : यह कीट बड़ी संख्या में पौधे की मुलायम पत्तियों और तने पर आक्रमण करता है। यह कीट पौधे के रसों को चूस लेता है तथा बड़ी संख्या में इसके प्रकोप के कारण पत्ती और तने मुड़कर मर जाते हैं। इसे नियंत्रित करने के लिए इमिडाक्लोप्रिड 1 मिली या ऐसीटाम्प्रिड 1 ग्राम/लीटर पानी घोल बनाकर स्प्रे करें।

थ्रिप्स : यह कीट सभी प्रकार के पौधों पर आक्रमण करता है। यह पौधों के क्लोराफिल को चबाता और चूसता है तथा पत्तियों पर चांदी के रंग के धब्बे छोड़ देता है।

पर्ण कुंचन : पर्ण कुंचन श्वेत मक्खी द्वारा फैलने वाला विषाण्विक रोग है जो फसल की पौध अवस्था से आरंभ होकर उसकी कटाई तक बना रहता है। यह रोग विशेष रूप से टमाटर में देखा जाता है लेकिन कभी–कभी मिर्च की फसल पर भी आक्रमण करता है तथा फसलों को बहुत क्षति पहुंचाता है। प्रभावित पौधों की पत्तियां मुड़ जाती हैं, उन पर चित्तियां पड़ जाती हैं तथा मुड़ी हुई पत्तियां सिकुड़ जाती हैं।

रोग नियन्त्रण : डैम्पिंग ऑफ एकमात्र ऐसा रोग है जो नर्सरी में गंभीर आक्रमण करता है। डैम्पिंग के अंतर्गत वास्तव में पौधों के अनेक मृदा वाहित रोग तथा बीज वाहित कवक शामिल हैं। सामान्यतः संक्रमण गर्म तथा तप्त तापमान पर तब होता है जब नमी का स्तर कुछ हल्का होता है। यह रोग पाइथियम, फाइटोफ्थोरा, राइज़ोक्टोनिया तथा फ्यूजेरियम कवकों द्वारा उत्पन्न होता है।

डैम्पिंग ऑफ के लक्षण : पौध कमजोर तथा असमान दिखाइ देती है। स्वस्थ दिखाई देने वाली पौध अचानक गिर जाती है। संक्रमण के परिणामस्वरूप माध्यम/मृदा के नीचे क्षत या घाव दिखाई देते हैं। पौध हल्की सी रंगहीन होकर गिर जाती है और अंततः उसकी मृत्यु हो जाती है।

नियंत्रण

1. रोगमुक्त रोपण सामग्री, बीज आदि का उपयोग
2. मैथम सोडियम से युक्त निर्जर्मीकृत प्रो ट्रे प्रयोग करें।
3. नमी का स्तर तत्काल कम करें।
4. यदि संभव हो तो pH का स्तर कम करें (डैम्पिंग ऑफ के लिए 6–6.5 pH अपेक्षाकृत कम संवेदनशील है)
5. कैप्टान या थिरैम के साथ बीजोपचार करें। अंकुरण के पश्चात् पौधों को रेडोमिल के घोल से सींचें।

समन्वित कृषि पद्धति कृषकों की आय संवर्धन का मुख्य आधार

विद्या सागर* एवं डॉ राम जीत**

देश की बढ़ती जनसंख्या एवं बढते आवश्यकता के चलते कृषि पर दबाव बढता जा रहा है। देश में विगत वर्षों लगभग 0.12 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से कृषि योग्य भुमि के क्षेत्र में कमी आ रही है। जहाँ एक तरफ किसान की जोत कम होती जा रही है, वही कृषि संबधी उत्पादों की मांग बढती जा रही है। देश में कुल खेती योग्य भूमि का 36.79 प्रतिशत ही सिंचित है। बढ़ती खेती की लागत, घटती जोत सें किसानों की आमदनी प्रभावित हो रही है। वर्तमान स्थिति में अक्सर ऐसा देखा जाता है कि कभी–कभी किसानों को उनकी फसल उगाने की लागत के बराबर भी पैदावार से दाम प्राप्त नहीं होते हैं। वर्तमान स्थिति में किसानों की आय दोगुनी कैसे की जा सकती है, इस संदर्भ में किसान भाइयों को निम्न कृषि तकनीकी के साथ समन्वित कृषि प्रणाली अपनानें की अवश्यकता है।

1. गुणवत्ता वाले प्रजातियों के बीजों का चयनः— अक्सर यह देखा जाता है किसान भाई स्थानीय प्रजातियों के बीज बुवाई के लिए प्रयोग करते है जिनकी पैदावार गुणवत्ता वाले प्रजातियों से करीब–करीब आधी होती है। अतः अच्छी गुणवत्ता एवं अधिक उपज वाले बीजों के इस्तेमाल से पैदावार करीब–करीब दोगुनी की जा सकती है।

2. बुवाई से पहले मृदा परीक्षणः— बुवाई से पहले मृदा का परीक्षण कराना अति आवश्यक है तथा खेत में उन्हीं उर्वरकों का प्रयोग करने की आवश्यकता होती है जो मृदा परीक्षण द्वारा दर्शाए जाते है। इसके अलावा उनकी कितनी मात्रा डालनी है, इसका भी अवलोकन मृदा परीक्षण द्वारा किया जा सकता है। ऐसा करने से उर्वरक की लागत में भी कमी आयेगी तथा पैदावार भी भरपूर होगी। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सरकार नें किसानों के लिए मृदा स्वास्थ कार्ड का आह्वान किया है।

3. सिंचाई का उचित प्रबन्धनः— पानी उत्पादन के लिए एक महत्वपूर्ण कारक है। अतः सिंचाई का प्रबंधन करना अति आवश्यक है। इस क्षेत्र में भारत सरकार भी सिंचित क्षेत्र को बढ़ाने के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार के प्रयास कर रही है। किसानों को भी उचित व्यवस्था के लिए नलकूप अथवा पानी का संग्रह हेतु तालाब इत्यादि बनाकर अपनें खेत में पानी की व्यवस्था का प्रबंध करना चाहिए। पानी की उपयोग दक्षता बढ़ानें के लिए बूंद–बूंद सिंचन एवं फॉव्वारे (स्प्रिंकलर) विधि से सिंचाई का प्रबंध करना चाहिए। भारत सरकार नें (मोर क्राप्स पर ड्राप) का नारा दिया है। उचित मात्रा में तथा उचित समय पर पानी की उपलब्धता से फसल की पैदावार बढ़ती है और लागत भी कम आती है।

4. मृदा में कार्बन की मात्रा बढ़ायें :— बुवाई से पहले कम्पोस्ट खाद की अनुमोदित मात्रा डालें। हमारे देश की मृदाओं में अक्सर देखा गया है कि कार्बन की मात्रा 1 प्रतिशत से भी कम है जो कम उपज के लिए जिम्मेदार है। अतः उसकी पूर्ति करने के लिए कम्पोस्ट खाद का डालना अति आवश्यक है। इससे जल उपयोग दक्षता एवं पोषक तत्व दक्षता बढ़ती है तथा फसल पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

5. खेती का यांत्रिकरणः— खेती में यांत्रिकरण करनें से लागत का खर्च कम हो जाता है तथा उत्पादन बढ़ जाता है। आज आवश्यकतानुसार हर प्रकार के बड़े– छोटे यंत्र विभिन्न फर्मों के उपलब्ध हैं। खेत की जुताई तथा बुवाई से कटाई तक, हर स्तर पर यांत्रिकरण लागत को कम करनें में विशेष भूमिका निभाता है।

6. लेसर लेवलिंग तकनीकी का प्रयोगः— हमारे खेत खलियानों की धरती समतलीय नहीं है जिसके कारण सस्य संबंधित प्रबंध कार्यों में अनेंक कठिनाई आती है। लेसर लेवलर यंत्र द्वारा खेतों को समतल किया जा सकता है। खेत के समतल होने पर पानी,

*सह प्राध्यापक/वि.व.वि. (पशु विज्ञान) एवं **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, पांती, अम्बेडकर नगर, मंशापुर–224168,उ0प्र0

खाद इत्यादि लागतों में विशेष कमीं होती है। साथ ही साथ फसल भी भरपूर होती है।

7. अनुमोदित सस्य क्रियाः— स्वस्थ फसलों को उगानें के लिए अनुमोदित सस्य क्रियाओं का प्रयोग करें। स्वस्थ फसल एवं भरपूर पैदावार के लिए किसान भाइयों को चाहिए कि बुवाई से लेकर कटाई तक अनुमोदित सस्य पैकेज एवं प्रैक्टिस का प्रयोग करें। उदाहरण के लिए फसलों की बुवाई का उचित समय, फसलों के बोने की उचित विधि, उर्वरक प्रबन्धन, खरपतवार प्रबंधन, कीट प्रबंधन तथा सिंचाई प्रबंधन आदि।

9. खेती में विविधीकरण अपनानें की अवश्यकताः— वर्तमान समय में केवल फसल से जीवनयापन करना लाभकारी नहीं है। अतः समयानुसार अब खेती में विविधीकरण की अत्यन्त आवश्यकता है। विविधीकरण से ना केवल किसानों के जोखिम कवर होते है अपित उनकी आय भी बढ़ती है। साथ ही साथ विविधीकरण करने से फसलों की पैदावार भी बढ़ती है। उदाहरणार्थ—

शुद्ध एवं संकर बीज उत्पादन— अच्छे एवं शुद्ध बीज की आवश्यकता बाजार में हमेशा रहती है। अनुसंधान केन्द्रो से सम्पर्क करके शुद्ध एवं संकर बीज उत्पादन की विधि अपनाकर अपनीं आय बढ़ा सकते हैं।

मधुमक्खी पालन— खेती में फसल उत्पादन के साथ मधुमक्खी पालन करना सरल है तथा कम लागत के साथ शुरू किया जा सकता है। फसल खेतों में मधुमक्खियों के डब्बे रखे जा सकते है इससे मधु उत्पादन से किसान की आय बढ़ेगी तथा साथ ही साथ मक्खियों द्वारा अनेक फसलों में परागण की क्रिया में तेजी आनें से फसलों की पैदावार बढ़ाने में भी मदद मिलेगी।

मशरूम की खेती— गेहूं एवं धान आदि से प्राप्त भूसे पर मशरूम की खेती आय का एक नया स्रोत है सामान्य तापमान एवं आर्द्र मौसम में अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए मशरूम की कई उन्नत किस्में उपलब्ध है जो किसानों को वर्तमान समय खेती के साथ अतिरिक्त लाभ अर्जित करनें में सहायक है।

बागवानी एवं सब्जी की खेती— खेती में फलों एवं सब्जियों का अत्यन्त महत्व है। अच्छे फलों एवं सब्जियों के उत्पादन से आय में काफी वृद्धि होती है। इसके साथ—साथ पुष्पों की खेती आजकल बड़े पैमाने में मुद्रा इकट्ठा करने में कारगर साबित हो रही है। पुष्पों की देश के प्रमुख बाजारों में मांग लगातार बढ़ती जा रही है। बागवानी को खेती के विविधीकरण में शामिल करके किसान एक अतिरिक्त आय स्रोत अपने जीवन में जोड़ सकते हैं। फलों एवं सब्जियों से मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे अचार, मुरब्बा आदि से, जिनकी बाजारों में काफी मांग का इस्तेमाल अतिरिक्त आय प्राप्त करने के लिए कर सकते हैं।

संरक्षित खेती— आज के परिवेश में संरक्षित खेती अधिक लाभ प्राप्त करनें के लिए महत्वपूर्ण स्रोत है। विधि में ग्रीननेट हाउस या पाली हाउस का निर्माण कर नियंत्रित वातावरण में हर मौसम की फल एवं सब्जियों की अच्छी पैदावार ली जा सकती है। इससे थोड़े से क्षेत्र में फसलों को उगाकर अधिक उत्पादन किया जा सकता है, क्योंकि इसमें वातावरण के कारक रोशनी, तापमान तथा आर्द्रता को नियंत्रित किया जाता है। इससे बेमौसमी सब्जियों को उगाकर बाजार में उच्च दामों पर बिक्री करके लाभ कमाया जा सकता है।

जैविक खेती— आर्गेनिक खेती के उत्पादों की मांग दिन—प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। बदलते परिवेश में कीटनाशकों के फसलों में इस्तेमाल के कारण स्वास्थ संबंधी समस्याओं के चलते जैविक उत्पाद की बाजार में भारी मांग तथा दाम भी अच्छे मिलते है। अतः किसान जैविक रूप से गेहूं, चावल, फल एवं सब्जियां उगाकर अच्छा लाभ कमा सकते हैं।

दुग्ध उत्पादन— खेती में फसलों के साथ दुधारू पशुओं का समावेश अत्यन्त आवश्यक है। दुधारू पशुओं के दुग्ध एवं दुग्ध संबंधी उत्पाद से किसानों की आय बढ़ती है। साथ ही साथ दुधारू पशुओं से प्राप्त गोबर, मलमूत्र से कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, नेडप

कम्पोस्ट के द्वारा फसल अवशेष का अधिक उपयोग करके ज्यादा मात्रा में जैविक खाद का उपयोग खेतों की उर्वरता बढ़ानें में करके फसलों की पैदावार बढ़ायी जा सकती है। साथ ही उन्नत नश्ल के दुधारु पशुओं से अच्छा दुग्ध उत्पादन भी प्राप्त किया जा सकता है।

मुर्गी पालन व्यवसाय– खेती के साथ मुर्गी पालन कम श्रम एवं कम समय में अच्छी आय देनें वाला व्यवसाय है। मुर्गी की कई नश्लों को किसान भाई फसलों से प्राप्त विभिन्न उप–उत्पादों की सहायता से कम व्यय से अच्छा लाभ प्राप्त कर सकतें है। साथ ही मुर्गी बीट का उपयोग खेतों की उर्वरता बढ़ानें में किया जी सकता है।

मछली पालन व्यवसाय– खेती में विविधीकरण के दौर में मछली पालन एक प्रमुख स्तम्भ है। वर्ष भर मछली उत्पादन से ना केवल भोजन की आवश्यकता पूरी होती है बल्कि बाजार में मछली को बेच कर अतिरिक्त आय अर्जित की जा सकती है, जहाँ अच्छी बारिश होती है वहां धान के खेतों में भी मछली पालन किया जाता है।

सूअर पालन व्यवसाय– खेती में विभिन्न प्रकार के उत्पाद प्राप्त होते हैं। सूअर पालन के लिए खेती से प्राप्त विभिन्न सस्ते उप–उत्पादों का इस्तेमाल करके अतिरिक्त लाभ कमाया जा सकता है।

बकरी पालन व्यवसाय– कृषि के साथ–साथ बकरी पालन को व्यवसाय के रूप पालन किया जायें तो यह अतरिक्त आय का महत्वपूर्ण साधन हो सकता है एवं साथ ही साथ बकरी मैगनी मृदा उर्वरता बढ़ानें में बहुत सहायक है।

बतख पालन– बदलते परिवेश में खेती में बतख पालन का समायोजन एक लाभकारी उपक्रम है। ये खेतों में तथा तालाबों में घूम कर वहाँ उपलब्ध कीड़े–मकोड़े खाकर बिना किसी बहुत लागत के अण्डे एवं मांस पैदा कर काफी अतिरिक्त आय उत्पन्न करने में मददगार होती है।

कृषकों को उक्त सभी व्यवसाय, फसल उत्पादन की सस्य क्रियायों से जुड़ी जानकारियों, रोग, कीट आदि का पूर्ण रूप से ज्ञान ना होने से उत्पादन में कमी आती है। अतः किसान भाइयों को उक्त सभी की पूर्ण जानकारी हेतु नजदीकी कृषि विश्वविद्यालय, कृषि संस्थान, जिले में स्थित कृषि विज्ञान केन्द्र, कृषि विभाग, पशु पालन, उद्यान विभाग, मत्स्य विभाग एवं अन्य कृषि संबन्धी विभाग से सम्पर्क कर सकते है। इन सस्थाओं से पूर्ण तकनीकी ज्ञान तथा विभिन्न योजनाओं का लाभ प्राप्त कर आय को दोगुना करने के लिए किसान भाई खेती में समन्वित कृषि प्रणाली के विभिन्न आयामों को शामिल करके ना केवल अपनी आय में बढ़ोत्तरी कर सकतें हैं बल्कि खेती में आने वाली लागत को भी कम कर सकतें हैं।

(पृष्ठ 03 का शेष)

5. सहजन पत्तियों के रस से उच्च रक्तचाप में लाभ होता है।
6. सहजन के पौध की छाल का प्रयोग गोंद बनाने में भी किया जाता है।

जड़ों का औषधीय गुण

1. सहजन के जड़ से उत्तम गुणवत्ता वाला आचार बनता है, जो बुन्देलखंड में अत्यधिक प्रचलित है।
2. जड़ का काढ़ा, सेंधा नमक व हींग के साथ पीने से मिर्गी के दौरों में लाभ होता है।
3. सहजन की छाल का काढ़ा, हींग व सेंधा नमक डालकर पीने से पित्ताशय की पथरी में लाभ होता है।
4. सहजन के ताजे फूलों का प्रयोग हर्बल टॉनिक बनाने में किया जाता है।
5. सहजन के फूल, हृदय व कफ रोगों में उपयोगी है।

फलियों का औषधीय गुण

1. फलियों की सब्जी खाने से पुराने गठिया, जोड़ों का दर्द, वायु संचार एवं वात रोगों में लाभ होता है।
2. फलियों की सब्जी खाने से गुर्दे और मूत्राशय की पथरी नियंत्रण में प्रभावी होता है।

जायद उर्द की उन्नत खेती

संजीत कुमार*, सोमेन्द्र नाथ** एवं आर0 आर0 सिंह***

किसान भाईयों, उर्द हमारे देश की एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। उर्द की खेती जायद और खरीफ की फसल के रूप में जा सकती है। यह आहार के रूप में अत्यंत पौष्टिक होती है जिसमे प्रोटीन 24 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 60 प्रतिशत और कैल्सियम व फास्फोरस का अच्छा स्रोत है। उर्द की खेती से भूमि को भी संरक्षण और उर्वरक व अन्य पोषक तत्वों की पूर्ति भी होती है। उर्द की फसल को किसान भाई भूमि के लिए हरी खाद के रूप में भी प्रयोग कर सकते है।

जलवायु– उर्द उच्च तापक्रम सहन करने वाली उष्ण जलवायु की फसल है। इसी कारण जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा होती है वहाँ अनेक भागों में जायद में उगाया जाता है। इसकी अच्छी वृद्धि और विकास के लिए 25 से 35 डिग्री सेल्सियस तापमान आवश्यक है, परन्तु यह 42 डिग्री सेल्सियस तापमान तक सहन कर लेती है। अधिक जलभराव वाले स्थानों में इसे नहीं उगाना चाहिए।

भूमि– उर्द की खेती बलुई मिट्टी से लेकर गहरी काली मिट्टी जिसका पी एच मान 6.5 से 7.8 तक में सफलतापूर्वक की जा सकती है। उर्द का अच्छा उत्पादन लेने के लिए खेत का समतल होना और खेत से जल निकास की उचित व्यवस्था का होना अति आवश्यक है।

उन्नत किस्में – नरेंद्र उर्द –1, आजाद उर्द –1, पंत उर्द –19 , पंत उर्द –35, पंत उर्द– 40, प्रसाद, वी बी एन– 5 टाइप –9, उत्तरा, के.यू. 300, मास– 414, एल बी जी– 402 आदि।

खेत की तैयारी– खेत की अच्छी तैयारी परिणामस्वरूप अच्छा अंकुरण व फसल में एक समानता के लिए बहुत जरूरी है। भारी मिट्टी की तैयारी में अधिक जुताई की आवश्यकता होती है। सामान्यतः 2 से 3 जुताई करके खेत में पाटा चलाकर समतल बना लिया जाता है तो खेत बुवाई के योग्य बन जाता है। ध्यान रहे कि जल निकास नाली की व्यवस्था अवश्य हो।

बुवाई का समय व तरीका– उर्द की जायद की फसल को फरवरी के तीसरे सप्ताह से मार्च के प्रथम सप्ताह तक बुवाई करे। खरीफ में मानसून के आगमन पर या जून के अंतिम सप्ताह में पर्याप्त वर्षा होने पर बुवाई करे। इसके लिए कतारों की दूरी 30 सेंटीमीटर और पौधों से पौधों की दूरी 10 सेंटीमीटर रखे एवं बीज 4 से 6 सेंटीमीटर की गहराई पर बोये।

बीज की मात्रा– जायद की फसल में बीजदर 20 से 25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बोना चाहिये और खरीफ में उर्द का बीज 12 से 15 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बोना चाहिये।

बीज शोधन– मिटटी और बीज जनित रोगों से बचाव के लिए 2 ग्राम थायरम और 1 गाम कार्बेन्डाजिम मिश्रण 2:1 प्रति किलोग्राम बीज या कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से शोधित करें। इसके बाद बीज को इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्लू एस एल से 7 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से उपचारित करें। बीज शोधन कल्चर से उपचारित करने के 2 से 3 दिन पूर्व करना चाहिए।

जैविक बीजोपचार– राइजोबियम कल्चर का एक पैकेट 250 ग्राम प्रति 10 किलोग्राम बीज के लिए पर्याप्त होता है। 50 ग्राम गुड़ या शक्कर को 0.5 लीटर पानी में घोलकर उबालें व ठण्डा कर लें। ठण्डा हो जाने पर ही इस घोल में एक पैकेट राइजोबियम कल्चर मिला लें। बाल्टी में 10 किलोग्राम बीज डाल

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, **वि0व0वि0, सस्य विज्ञान, कृषि विज्ञान केंद्र, बलिया,
***अपर निदेशक प्रसार, आ.न.दे.कृ. एवं प्रौ.वि.वि. कुमारगंज, अयोध्या

कर अच्छी तरह से मिला लें ताकि कल्चर के लेप सभी बीजों पर चिपक जाएं उपचारित बीजों को 8 से 10 घंटे तक छाया में फेला देते हैं। उपचारित बीज को धूप में नहीं सुखाना चाहिए। बीज उपचार दोपहर में करें ताकि शाम को या दूसरे दिन बुआई की जा सके। कवकनाशी या कीटनाशी आदि का प्रयोग करने पर राइजोबियम कल्चर की दुगनी मात्रा का प्रयोग करना चाहिए और बीजोपचार कवकनाशी–कीटनाशी तथा राइजोबियम कल्चर के क्रम में ही करना चाहिए।

उर्वरक की मात्रा– एकल फसल के लिए 15 से 20 किलोग्राम नत्रजन, 40 से 50 किलोग्राम फास्फोरस, 30 से 40 किलोग्राम पोटाश, प्रति हेक्टेयर की दर से अन्तिम जुताई के समय खेत में मिला देना चाहिए। उर्वरकों की मात्रा मिट्टी परीक्षण के आधार पर देना चाहिए। नाइट्रोजन और फासफोरस की पूर्ति के लिए 100 किलोग्राम डी ए पी प्रति हेक्टेयर का प्रयोग कर सकते है। उर्वरकों को अन्तिम जुताई के समय ही बीज से 5 से 7 सेंटीमीटर की गहराई तथा 3 से 4 सेंटीमीटर साइड पर ही प्रयोग करना चाहिए। 1.5 से 2.0 किलोग्राम जिंक (7.5 से 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट) प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई प्रबन्धन– आमतौर पर खरीफ की फसल को सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। यदि वर्षा का अभाव हो तो एक सिंचाई फलियाँ बनते समय अवश्य कर देनी चाहिए। उर्द की फसल को जायद में 3 से 4 सिंचाई की आवश्यकता होती है। प्रथम सिंचाई पलेवा के रूप में और अन्य सिंचाई15 से 20 दिन के अन्तराल में फसल की आवश्यकतानुसार करना चाहिए। पुष्पावस्था तथा दाने बनते समय खेत में उचित नमी होना अति आवश्यक है।

खरपतवार नियंत्रण– बुआई के 25 से 30 दिन बाद तक खरपतवार फसल को अत्यधिक नुकसान पहुंचाते हैं। यदि खेत में खरपतवार अधिक हैं, तो 20 से 25 दिन बाद एक निराई कर देना चाहिए। जिन खेतों में खरपतवार गम्भीर समस्या हों वहां पर बुआई से एक दो दिन पश्चात पेन्डीमिथालीन की 0.75 से 1.00 किलोग्राम सक्रिय मात्रा को 400 से 600 लीटर पानी में घोलकर एक हेक्टेयर में छिड़काव करना लाभप्रद रहता है।

कीट रोकथाम– पिस्सू भृग (गैलेरूसिड भृग)– यह कीट सुबह के समय नये पौधों की पत्तियों पर छेद बनाते हुए उन्हें खाता है और दिन में मिटटी की दरारों में छिप जाता है। वर्षा ऋतु में इस कीट का गुबरैला जड की गाँठों में सुराख कर जड़ों में घुस जाता है एवं इनको पूरी तरह खोखला कर देता है। इस कीट के द्वारा जड की गाँठों के नष्ट होने पर उर्द के उत्पादन में 60 प्रतिशत तक हानि देखी गई है। यह मूँग मोजेक विषाणु रोग का भी वाहक है।

रोकथाम– मोनोक्रोटोफॉस 10 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम बीज या डाईसल्फोटॉन 5 जी, 40 ग्राम प्रति किलो ग्राम बीज के हिसाब से बीजो को उपचारित करें। फोरेट 10 जी की 10 किलोग्राम या डाईसल्फोटॉन 5 जी 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव करना चाहिए।

पत्ती मोड़क कीट– इल्लियां पत्तियों को ऊपरी सिरे से मध्य भाग की ओर मोड़ती है। यही इल्लियां कई पत्तियों को चिपका कर जाला भी बनाती है। इल्लियां इन्हीं मुड़े भागों के अन्दर रहकर पत्तियों के हरे पदार्थ क्लोरोफिल को खा जाती हैं। जिससे पत्तियां पीली सफेद पड़ने लगती है।

रोकथाम– क्विनालफॉस दवा की 30 मिलीलीटर मात्रा 15 लीटर पानी की दर से छिडकाव करें, आवश्यकता होने पर दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव से 15 दिन बाद करें।

एफिड– निम्फ और व्यस्क कीट बडी संख्या में पौधो की पत्तियों, तनों, कली एवं फूल पर लिपटे रहते है

और फूलों का रस चूसकर पौधों को हानि पहुँचाते हैं।

नियंत्रण– फसल को ऐसीटाम्प्रिड 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के साथ घोल कर छिड़काव करें।

सफेद मक्खी– दोनों ही पत्तियों की निचली सतह पर रहकर रस चूसते रहते हैं। जिससे पौधे कमजोर होकर सूखने लगते हैं। यह कीट अपनी लार से विषाणु पौधों पर पहुंचाता है और यलो मौजेक नामक बीमारी फैलाने का कार्य करते हैं।

नियंत्रण– पीले रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। फसल में इमिडाक्लोरोप्रिड 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के साथ घोल कर छिड़काव करें।

रोग और रोकथाम

पीला चित्तेरी रोग– इस रोग की प्रारम्भिक अवस्था में चित्तकवरे धब्बे के रूप में पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं। बाद में धब्बे बड़े होकर पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं। जिससे पत्तियों के साथ–साथ पूरा पौधा भी पीला पड़ जाता है। यह रोग विषाणु द्वारा मृदा, बीज तथा संस्पर्श द्वारा संचालित नहीं होता है। जबकि सफेद मक्खी के द्वारा फैलता है।

रोकथाम : 1. पीला चित्तेरी रोग में सफेद मक्खी के रोकथाम हेतु ऐसीटाम्प्रिड 1 ग्राम/लीटर पानी इमिडाक्लोरोप्रिड 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी और सल्फेक्स 3 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव 500 से 600 लीटर पानी में घोलकर 3 से 4 छिड़काव 15 दिन के अंतर पर करके रोग का प्रकोप कम किया जा सकता है।

2. रोगरोधी किस्में जैसे– पंत उर्द– 19, पंत उर्द– 30, उत्तरा, नरेन्द्र उर्द– 1, उजाला, प्रताप उर्द– 1, इत्यादि उगाएं।

झुर्सदार पत्ती रोग, मौजेक मोटल, पर्ण कुंचन रोग– यह भी विषाणु रोग है। इस रोग के लक्षण बोने के चार सप्ताह बाद प्रकट होते हैं। तथा पौधे की तीसरी पत्ती पर दिखाई पड़ते हैं। पत्तियाँ सामान्य से अधिक वृद्धि तथा झुर्रियां या मड़ोरपन लिये हुये तथा खुरदरी हो जाती है।

रोकथामः 1. रोकथाम हेतु इमिडाक्लारोप्रिड 70 डब्लू एस 5 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से बीजोपचार करें।

2. ऐसीटाम्प्रिड 30 ई सी, 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिडकाव रोगवाहक की रोकथाम के लिये करना चाहिए।

चूर्णी कवक– इस बीमारी में सर्वप्रथम पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद पाउडर जैसी वृद्धि दिखाई देती है जो कवक के विषाणु एवं कवक जाल होते हैं। रोग की बढ़वार के साथ–साथ रोग के धब्बे भी बढ़ते जाते हैं जो कि वृत्ताकार हो जाते हैं और पत्तियों की निचली सतह पर भी फैल जाते हैं रोग का तीव्र प्रकोप होने पर पत्तियों की दोनों सतह पर सफेद चूर्ण फैल जाने के कारण प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रभावित होती है।

1. फसल पर घुलनशील गंधक 80 डब्ल यू पी, 3 ग्राम प्रति लीटर या कार्बेन्डाजिम 50 डब्लू पी, 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

2. रोगरोधी किस्में जैसे– सी ओ बी जी–10, एल बी जी– 648, एल बी जी– 17, प्रभा, आई पी यू– 02–43, ए के यू– 15 और यू जी– 301 उगानी चाहिए।

कटाई एवं मड़ाई– जब 70 से 80 प्रतिशत फलियां पक जाएं, हँसिया से कटाई आरम्भ कर देना चाहिए। तत्पश्चात बण्डल बनाकर फसल को खलिहान में ले आते हैं। 3 से 4 दिन सुखाने के पश्चात थ्रेसर द्वारा भूसा से दाना अलग कर लेते हैं।

पैदावार– उपरोक्त विधि से प्रबंधन की गई फसल से 12 से 15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक दाने की पैदावार मिल जाती है।

भण्डारण– धूप में अच्छी तरह सुखाने के बाद जब दानों में नमी की मात्रा 9 से 10 प्रतिशत या कम रह जाये, तभी फसल को भण्डारित करना चाहिए।

पर्यावरण प्रदूषण का पालतू पशुओं पर दुष्प्रभाव एवं उससे बचाव

एस. के. सिंह, शैलेन्द्र सिंह, एस. पी. सिंह, मनोज कुमार एवं शिवेंद्र प्रताप सिंह

पर्यावरण का विकास प्राकृतिक संसाधनों और गतिविधियों से हुआ है। इसकी पांच मूलभूत इकाइयाँ है– जल, वायु, भूमि तथा इनमें सन्निहित वनस्पतियां और जंतु समुदाय। इन इकाइयों के सामंजस्य से ही पारिस्थितिकी तंत्र बनता है और जिस परिवेश में हम तथा अन्य जीव, जन्तु और वनस्पतियों का अस्तित्व है वह पर्यावरण है। इस प्रकार प्रत्येक जीवधारी के लिए स्वच्छ एवं स्वस्थ्य पर्यावरण अतिआवश्यक है। पर्यावरण प्रदूषण वह स्थिति है, जिसमें पर्यावरण में किसी ऐसे रासायनिक, भौतिक या जैविक कारकों की उपस्थिति जो पर्यावरण की गुणवत्ता और जीवन के लिए हानिप्रद हो, पर्यावरण प्रदूषण कहलाती है। चूंकि पर्यावरण की इकाइयों एक–दूसरों से संबंधित होती हैं। अतः किसी एक इकाई का प्रदूषण दूसरे को भी प्रभावित करता है। जैसे, यदि वायुमंडल प्रदूषित है तो वर्षा का जल प्रभावित होगा और फलस्वरूप भूमि और उसमें उगने वाले पेड़–पौधे तथा उन पर निर्भर जीव–जंतु भी प्रभावित होंगे। मनुष्य और पालतू पशु भोजन के लिए वनस्पतियों पर निर्भर होते हैं, अतः वे भी प्रदूषण के प्रभाव में आ जाते हैं।

पर्यावरण प्रदूषण का पालतू पशुओं पर प्रभाव

यह सर्वविदित है कि पर्यावरण प्रदूषण का प्रभाव पालतू पशुओं पर भी होता है। पालतू पशु हमारे निकटतम सहयोगी हैं और वे भी हमारे परिवेश में ही रहते हैं। इसलिए वे भी हमारी भांति पर्यावरण प्रदूषण का दुष्प्रभाव झेलते हैं। यहाँ तक कि कुछ मायनों में पर्यावरण प्रदूषण का प्रभाव मानव को अपेक्षा पशुओं पर अधिक होता है। कई प्रदूषण जन्य स्वास्थ्य समस्याएं जैसे –लंदन स्मोग, नर्व गैस विषाक्तता, मिनामाता रोग आदि स्वास्थ्य समस्याएं पशुओं में मनुष्यों से पहले परिलक्षित हुई। इसका कारण मनुष्यों की अपेक्षा पशुओं की प्रकृति से अधिक निकटता और मनुष्यों की अपेक्षा प्राकृतिक संसाधनों से सीधे आहार प्राप्त करना है। पशुओं को अपने आहार को परिष्कृत करने का कोई साधन नहीं होता तथा वे अधिकांश खुले वातावरण में रहते हैं। इस प्रकार उन पर बाह्य–पर्यावरण प्रदूषण के दुष्प्रभावों की संभावनाएं अधिक होती है। पर्यावरण प्रदूषण से पशु स्वास्थ्य पर परिलक्षित या अपरिलक्षित दोनो ही प्रकार की समस्याएं होती हैं। विशिष्ट लाक्षणिक रोगों में फ्लोरोसिस, गुरूधातु जैसे– सीसा विषाक्तता, कीटनाशक विषाक्तता तथा प्लास्टिक प्रदूषण जन्य उदर रोग प्रमुख है। अन्य रोगों में वायु प्रदूषण जन्य श्वसन समस्याएं, अपच आदि भी प्रदूषण से हो सकते है। प्रदूषण से पशु उत्पादों की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है, जो जन–स्वास्थ्य के लिए भी हानिप्रद हो सकती है। जैसे, कीटनाशक की दूध या मांस में अधिकता मनुष्यों के लिए घातक पाई गई है। इस कारण पशु उत्पादों की विश्व बाजार में बिक्री पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है।

फ्लोरोसिस रोग

यह समस्या फ्लोरीन प्रदूषण से होती है। इस रोग के प्रमुख स्रोत भू–जल और मिट्टी में प्राकृतिक रूप से फ्लोरीन की अधिक मात्रा तथा फ्लोरीन उत्सर्जित करने वाले कारखाने, विद्युत ताप गृह, चीनी मिट्टी व कांच के उद्योग तथा ईंट भट्ठों से उत्पन्न प्रदूषण है। दुधारू पशुओं के चारे में 40 मि.ग्रा. प्रति किलोग्राम और पानी में 0.8–1.5 मि.ग्रा. प्रति लीटर फ्लोरीन से 5–6 माह में फ्लोरोसिस हो सकती है। यदि खनिज मिश्रण उच्चकोटि का नहीं है तो उसमें फ्लोरीन की मात्रा अधिक हो सकती है। यदि यह मात्रा एक ग्राम प्रति किलोग्राम से अधिक हो तो फ्लोरोसिस की संभावना रहती है। हमारे देश में उत्तर प्रदेश, राजस्थान, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, गुजरात, पंजाब, तमिलनाडु में विभिन्न स्रोतों से पशुओं में फ्लोरोसिस रोग की कई घटनाएं गत दो दशकों में संज्ञान में आई है। फ्लोरोसिस रोग के प्रमुख लक्षण हड्डियों तथा दांतों के विकास के रूप में दिखाई पड़ते हैं। रोगी पशु की टांगों, जबड़ों व छाती की अस्थियों में अनियमित वृद्धि तथा गांठे पड़ जाती है। पशु लंगड़े हो जाते हैं। दातों

विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञानं केंद्र, बेलीपार, गोरखपुर

पर पीले बादामी धब्बे और दांतों का क्षय फ्लोरोसिस की खास पहचान है। इसके अतिरिक्त फ्लोरोसिस से अपच, एनीमिया, त्वचा का रूखापन, अधिक मृत्युदर, दुग्ध उत्पादकता में गिरावट भी पाई जाती है। एक बार लक्षण परिलक्षित होने के बाद फ्लोरोसिस रोग का कोई उपचार नहीं है। इस रोग से बचने के लिए प्रदूषित क्षेत्र से पशुओं को दूर रखें तथा फ्लोरीन अधिकता और फ्लोरीन प्रदूषित क्षेत्रों में चरने वाले पशुओं को 30–50 ग्राम एल्युमुनियम सल्फेट 15–20 दिन तक दें।

सीसा विषाक्तता

पशुओं के लिए सीसा विषाक्तता का प्रमुख स्रोत सीसा उत्पादों से उत्पन्न प्रदूषण, बैटरी उद्योग, पेंट के खाली डिब्बे, लौह भट्टियां आदि है। मोटर वाहनों से निकलने वाला धुंआ भी सीसा प्रदूषण का महत्वपूर्ण स्रोत रहा है। सीसे से प्रदूषित चारा, घास या पानी के सेवन से पशुओं में तीव्र या चिरकालिक विष का प्रभाव होता है। तीव्र विष में पशु को अपच, दस्त, सुस्ती के 1–2 घंटे बाद मस्तिष्क विक्षेप के लक्षण पैदा होते हैं। इनमें पशुओं के मुंह से सफेद झाग निकलना शुरू हो जाता है, शरीर कांपने लगता है तथा पागलपन के लक्षण जो रैबीज से काफी मिलते–जुलते हैं। इस अवस्था के 2–3 घंटे बाद जानवर मर जाता है।

कीटनाशक व अन्य कृषि रसायन जन्य प्रदूषण का प्रभाव

खेती में प्रयुक्त होने वाले कीटनाशकों, रसायनिक उर्वरकों व दवाओं से प्रदूषित पर्यावरण भी पशु स्वास्थ्य के लिए खतरा है। कई बार खेती में प्रयुक्त यह रसायन पशुओं की पहुंच में होते हैं, वे इन्हें खा लेते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप तीव्र विष लक्षणों के बाद मृत्यु हो सकती है। कम मात्रा में कीटनाशकों के लगातार एक्सपोजर से पशुओं में सुस्ती और कमजोरी आ जाती है और उनके दूध या मांस में कीटनाशकों को अवांछित मात्रा से जनस्वास्थ्य की समस्याएं पैदा हो सकती हैं। गैमेक्सीन, मैलाथियान, एल्ड्रिन आदि कीटनाशकों की विषाक्तता के लिए एट्रोपिन सल्फेट के इंजेक्शन प्रभावी है।

प्लास्टिक प्रदूषण

प्लास्टिक प्रदूषण, पशुओं में विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों की गाय–भैंसों के लिए काफी घातक पाया गया है। पॉलीथिन की थैलियों में, फलों के छिलके और रसोई का कचरा फेंकना जाम प्रचलन में है। होता यह है कि चरने वाले गोपशु इन्हें खा लेते हैं और चूँकि प्लास्टिक का विघटन नहीं होता है अतः यह इन पशुओं के पेट में पर्त–दर–पर्त जमता रहता है। इससे पशुओं में अपच, कब्ज, भूख की कमी, कमजोरी के लक्षण पैदा हो जाते हैं और चित उपचार के अभाव में पशु की मौत हो जाती है। अभी हाल ही में जब शहरी कई गोपशुओं के पेट का आपरेशन किया गया तो उसमें भारी मात्रा में पॉलीथिन की थैलियां और प्लास्टिक के अन्य सामान निकाले गए। कुछ साल पहले उत्तर प्रदेश सरकार ने इस प्रकार के आपरेशन का सघन अभियान भी चलाया था। समाधान के रूप में पशुओं को भूखा न रखें तथा चरने वाले स्थानों में पॉलीथिन की थैली और प्लास्टिक के टुकड़े न फेंके। इसके अतिरिक्त बड़ी गाय को 400 मिलीलीटर सरसों के तेल के साथ 100 मिलीलीटर नीम का तेल पिलाने से आराम मिलता है।

प्रदूषण जन्य अन्य समस्याएं

कल–कारखानों और खानों से निकलने वाली धूल और धुंए तथा स्राव से नदियों के प्रदूषण से पशुओं में चर्मरोग, पाचन तंत्र की समस्याएं तथा सांस के रोग हो सकते हैं। छायादार वृक्षों के अभाव में चरने वाले पशुओं में खनिज अल्पता और गर्मी के मौसम में लू लगने की संभावना अधिक होती है। ध्वनि प्रदूषित क्षेत्रों में रहने काले पशुओं की उत्पादन क्षमता में गिरावट पाई गई है।

प्रदूषण से पशुओं को बचाने के सामान्य उपाय

पशुओं को शहरी और औद्योगिक क्षेत्रों में न चरने दें तथा कीटनाशक तथा अन्य रसायनों को उनकी पहुंच से दूर रखें। कारखानों से प्रदूषित चारा पानी पशुओं को न दें। यदि आपके पशु किसी औद्योगिक क्षेत्र के निकट चरने जाते हैं तो तुरन्त विशेषज्ञ से सलाह लें। पशुओं को अच्छी गुणवत्ता का खनिज मिश्रण दें तथा गायों को आवारा और भूखा न रखें। पशुओं में विषाक्तता के लक्षण दिखते ही निकटवर्ती पशु चिकित्सालय पर ले जाकर या पशु चिकित्सक की सलाह से चिकित्सा करनी चाहिए।

कुक्कुट पक्षियों की बुरी आदतें, उनके कारण, निवारण एवं प्रबंधन

कबीर आलम* एवं सूर्य कान्त**

कुक्कुट पक्षी कुछ बुरी आदतों से पीड़ित हो सकते हैं, जिन्हें पोल्ट्री विकार के नाम से जाना जाता है। ऐसी बुरी आदतें शुरू से ही काफी व्यापक हो जाती हैं और इनका उन्मूलन एक बड़ी प्रबंधकीय समस्या खड़ी कर देता है। परिणामस्वरूप, इन बुराइयों (बुरी आदतों) से मुर्गीपालकों को भारी नुकसान हो सकता है। बुरी आदतों (वाइस) जीव द्वारा अर्जित एक दोषपूर्ण बुरी आदत है, जो स्वयं के साथ–साथ समूह के अन्य जानवरों के स्वास्थ्य, कल्याण, व्यवहार और प्रदर्शन को प्रभावित करती है। इन बुराइयों से पोल्ट्री किसान को भारी नुकसान हो सकता है, खासकर बिछावन प्रणालियों में, जो आज अधिक आम हैं। एक बार विकसित होने के बाद यह तेजी से पूरे झुंड में फैल जाता है और फिर इसका उन्मूलन एक बड़ी समस्या बन जाता है। कुछ बुराइयों की उत्पत्ति खराब प्रबंधन, आवास से होती है, जबकि कुछ की उत्पत्ति पोषण संबंधी होती है। अगर शुरुआत से ही सावधानीपूर्वक निगरानी न की जाए तो ये बुराइयां पोल्ट्री में किसी भी समय विकसित हो सकती हैं। निम्न कुछ प्रमुख बुरी आदतें (वाइस) हैं –

- फीदर पीकिंग
- ब्रायलर पक्षियों का एक दूसरों को काटना (कैनबलिजम) / सहमांस भक्षण
- अंडा छिपाना
- अंडा खाना
- पाइका
- फाइटिंग

कुक्कुट पक्षियों में दोषों के विकास के सबसे सामान्य कारण हैं

- पोल्ट्री हाउस में भीड़भाड़ के कारण व्यायाम का अवसर कम हो जाता है और कम सक्रिय कुक्कुट पक्षी बुरी आदतें अपना लेते हैं।
- प्रोटीन की कमी वाला आहार या कम आहार का प्रावधान या आहार में मक्के / मक्का की अधिकता को महत्वपूर्ण कारक कहा जाता है।
- नरभक्षी गतिविधि के विकास के लिए आर्जिनिन और मेथियोनीन (अमीनो एसिड) की कमी को अधिक जिम्मेदार माना जाता है।
- नमक और खनिजों (पोषक तत्वों) की कमी।
- नई मुर्गियों द्वारा बड़े अंडे देने के कारण बाहरी जननांग में रक्तस्राव अन्य पक्षियों को आकर्षित करता है और एक बार जब पक्षियों को रक्त और मांस के प्रति स्वाद विकसित हो जाता है तो उनमें नरभक्षण की आदत विकसित हो जाती है।
- आनुवांशिक प्रवृतियां।
- ज्यादा रौशनी एवं ज्यादा गर्मी।
- मृत पक्षियों का अनुचित निपटान।
- परजीवी संक्रमण के कारण शरीर से पंखों का नष्ट होना या त्वचा से रक्तस्राव के कारण नरभक्षण की संभावना हो सकती है।
- पक्षियों के बीच लड़ाई से घाव हो जाते हैं, जिससे नरभक्षी गतिविधि को प्रोत्साहन मिलता है।

ब्रायलर पक्षियों का एक दूसरों को काटना (कैनबलिजम) / सहमांस भक्षण

वेंट पर चोंच मारना कुक्कुट पक्षियों का एक असामान्य व्यवहार है जो मुख्य रूप से व्यावसायिक अंडे देने वाली मुर्गियों द्वारा किया जाता है। इसकी विशेषता क्लोअका, आसपास की त्वचा और अंतर्निहित ऊतकों को चोंच मारने से होने वाली उत्तकीय क्षति है। इससे चोंच मारने से प्रभावित कुक्कुट पक्षी को दर्द और परेशानी होती है। त्वचा के फटने से रोग की संभावना बढ़ जाती है और नरभक्षण हो सकता है। नरभक्षण पोल्ट्री में देखी जाने वाली सबसे आम बुराईयों में से एक है, जहां झुंड के पक्षी अपने साथी पर हमला करते हैं और चोंच मारते हैं और उसका मांस (मुख्य रूप से कोंब, वेंट आदि) खाते हैं, जिससे गहरे घाव, उत्पादन में हानि और कभी–कभी भारी मृत्यु दर होती है। एक बार जब कुक्कुट पक्षी इस विकार को अपना लेते हैं तो

*पीएच.डी छात्र, पशु मादा रोग एवं प्रसूति विज्ञान विभाग, **पी.जी. छात्र, पशुधन उत्पादन प्रबन्धन विभाग
पशुचिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, एएनडीयूएटी, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

यह तेजी से झुंड में फैलता है और फिर नियंत्रण असंभव हो जाता है। घाव, सूजन या रक्त की उपस्थिति, विशेष रूप से क्लोअकल छिद्रों के आसपास, सहमांस भक्षण के पुष्टिकारक संकेतक हैं।

निवारण (रोकथाम) एवं प्रबंधन –

- रोकथाम इलाज से बेहतर है'' यह कथन नरभक्षण के लिए सही है। इसलिए, पोल्ट्री किसान को नरभक्षण को रोकने के लिए सतर्क रहना चाहिए, क्योंकि इसका कोई सीधा इलाज नहीं है।
- चोंच काटना (डीबीकिंग)– ऊपरी चोंच का एक तिहाई हिस्सा और निचली चोंच का सिरा काटना होता है। पक्षियों की तुरंत चोंच काटना आवश्यक है। इसे एक दिन के बच्चे से लेकर किसी भी उम्र के चूजों तक मैन्युअल या यंत्रवत् किया जा सकता है। हालाँकि, डीबीकिंग के यांत्रिक तरीके का एक फायदा यह है कि इसमें चोंच को दूसरी बार काटने की आवश्यकता नहीं होती है, जो मैन्युअल डीबीकिंग के मामले में आवश्यक हो सकती है।
- सहमांस भक्षण में शामिल कुक्कुट पक्षियों को अलग किया जाना चाहिए। घायल पक्षियों को भी अलग किया जाना चाहिए और उचित उपचार दिया जाना चाहिए। मुर्गीपालन में घाव भरने के लिए मार्गोसा तेल प्रभावी पाया गया है।
- पक्षियों की अत्यधिक भीड़ को तुरंत ठीक किया जाना चाहिए।
- चारे में कच्चा मांस शामिल करना या फिश मील की मात्रा बढ़ाना।
- पोल्ट्री राशन में विटामिन, खनिज मिश्रण और नमक की मात्रा थोड़ी बढ़ाई जा सकती है।
- कहा जाता है कि आहार में मेथिओनिन की बढ़ी हुई मात्रा इस आदत को परतों में रोकती है।
- फीड हर समय पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होना चाहिए।

अंडा खाना

कभी–कभी पक्षियों में अपने ही अंडे खाने की आदत विकसित हो जाती है। इस बुरी आदत को रोकना काफी मुश्किल हो जाता है। यह टूटे हुए अंडों की उपस्थिति या अंडों के दुर्घटनावश टूटने के कारण शुरू हो सकती है। यह सबसे आम पोल्ट्री दोषों में से एक है और एक बार जब पक्षियों को इसका स्वाद आ जाता है तो वे अपने अंडे खुद ही तोड़ना शुरू कर देते हैं। अंडे का पतला या नरम छिलका या बिछाने वाले क्षेत्र में पर्याप्त बिस्तर सामग्री की कमी, ऐसे अंडों के टूटने और आसानी से टूटने का कारण बन सकते हैं, जिससे अंडे आकर्षित होते हैं। बाड़ों में लंबे समय तक अंडों की मौजूदगी भी पक्षियों को अंडा खाना शुरू करने के लिए प्रोत्साहित कर सकती है।

निवारण (रोकथाम) एवं प्रबंधन

- जिन पक्षियों में यह आदत विकसित हो गई है उन्हें अंडों से अलग कर दें। (अंडे देना, पक्षियों से दूर होना चाहिए)
- भोजन में चूना पत्थर और प्रोटीन की मात्रा बढ़ानी चाहिए।
- अंडा संग्रहण अंतराल कम किया जाना चाहिए।
- डीबीकिंग से भी यह प्रवृत्ति कम हो जाती है।
- बिछाने वाले क्षेत्र में अंधेरा इस आदत को रोक सकता है।
- अंडा खाने वालों को एक टेढ़े–मेढ़े पिंजरे में रखना चाहिए, ताकि अंडे देने के बाद अंडा लुढ़ककर पक्षी की पहुंच से दूर हो जाए।

अंडा छिपाना –

हालाँकि, अंडा छिपाना जंगली मुर्गों की मातृ प्रवृत्ति है, लेकिन कभी–कभी यह आदत घरेलू मुर्गों में विकसित हो सकती है, जिन्हें पर्याप्त जगह और चलने–फिरने की आजादी होती है। वे अंडे को खेत, झाड़ियों आदि में छिपा देते हैं। यह सघन प्रणाली में नहीं देखा जाता है, क्योंकि वहां आवाजाही और जगह की सीमित स्वतंत्रता होती है।

निवारण (रोकथाम) एवं प्रबंधन –

- पोल्ट्री हाउस के अंदर बिछाने का क्षेत्र बनाया जाना चाहिए और चूरा, पुआल आदि प्रदान करके आरामदायक बनाया जाना चाहिए।
- अंडे देने वाले पक्षियों की आवाजाही की स्वतंत्रता को प्रतिबंधित करें।

(शेष पृष्ठ 28 पर)

बैकयार्ड मुर्गीपालन द्वारा सतत ग्रामीण आजीविका

अमित कुमार सिंह, आर. के. सिंह एवं संदीप कुमार

यह सच है कि लोग स्वास्थ्य के प्रति काफी जागरूक हो रहे हैं और लाभकारी प्रभावों के कारण वे अपने आहार में अधिक पशु प्रोटीन को शामिल कर रहे हैं। इसके अलावा, यह ध्यान देने योग्य बात है कि भारत के नियंत्रक जनरल के एक सर्वेक्षण के अनुसार, 15 से 35 वर्ष की आयु के 75 प्रतिशत से अधिक भारतीय युवा मांसाहारी हैं। यह भारत में पोल्ट्री उद्योग के जबरदस्त दायरे को प्रदर्शित करता है। बैकयार्ड मुर्गी पालन लंबे समय से भारतीय खेती का अभिन्न अंग रहा है। यह फसलों और अन्य उत्पादों की बिक्री के माध्यम से अतिरिक्त आय में सहायता कर रहा है। बैकयार्ड पोल्ट्री उत्पादन प्रणाली में, आम तौर पर, पक्षियों को अपने खाद्य पदार्थों को खोजने और चुनने के लिए एक संलग्न क्षेत्र में लिए खुला रखा जाता है। एक छोटा सा क्षेत्र, छोटा घर, उनके भोजन क्षेत्र के साथ प्रदान किया जाता है, जहां वे ज्यादातर सूर्यास्त के बाद आराम करने के लिए वापस लौटते हैं और पानी की सुविधा के प्रावधान के अनुसार छोटी पूरक फीड सामग्री प्राप्त करते हैं। वे कभी–कभी घरेलू रसोई के अवशेषों पर भोजन कर लेते हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि उन्हें शायद ही कोई स्वास्थ्य सुविधा मिलती है। आम तौर पर हाइब्रिड चूजों की मृत्यु दर देसी चूज़ों की अपेक्षा अधिक होती है। इस उद्यम में उपयोग किए जाने वाले पक्षी आमतौर पर स्थानीय नस्ल के प्रकार के होते हैं और वे ज्यादातर रंगीन प्रकार के होते हैं। वे परिवर्तनशील जलवायु परिस्थितियों के साथ कठोर होते हैं और काफी रोग प्रतिरोधी होते हैं। बैकयार्ड पोल्ट्री उत्पादन को उतनी अच्छी आय न प्रदान करने वाली गतिविधि कहा गया है, हालांकि, अब यह अवधारणा बहुत बदल गयी है। हाल के अध्ययनों से पता चलता है कि बेहतर कृषि पद्धतियों और बेहतर नस्लों की उपलब्धता के साथ, त्वरित और आशाजनक लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं। वर्तमान में प्रति व्यक्ति अंडे और मांस की उपलब्धता क्रमशः 79 और 2.96 किलोग्राम प्रति वर्ष है जो कि आईसीएमआर (पोषण सलाहकार समिति), यानी 180 अंडे और 10.8 किलोग्राम पोल्ट्री मांस प्रति वर्ष की सिफारिश से कम है, जो कि पश्चिमी देशों की तुलना में बहुत कम है। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, यूरोपीय संघ और ब्राजील चिकन मांस का उपभोग भारतीय खपत की तुलना में 2–3 गुना अधिक करते हैं। हालांकि, भारतीय ब्रायलर मांस उद्योग 7 प्रतिशत से अधिक बढ़ रहा है। पशुधन की नवीनतम जनगणना से पता चलता है कि 2019 में भारत की कुक्कुट आबादी 851.81 मिलियन है, जो पिछली जनगणना की तुलना में 16.8 प्रतिशत अधिक पाई गई। जिसमें में कुल बैकयार्ड पोल्ट्री 317.07 मिलियन थी, जो पिछली जनगणना की तुलना में 45.8 प्रतिशत अधिक है। जबकि, दूसरी ओर, 2019 में वाणिज्यिक कुक्कुट 534. 74 मिलियन थी जो पिछली जनगणना की तुलना में 4. 5 प्रतिशत अधिक था। सांख्यिकीय आंकड़ों ने स्पस्ट सुझाव दिया कि बैकयार्ड पोल्ट्री क्षेत्र में जबरदस्त वृद्धि हुई है। यह वाणिज्यिक मुर्गी उत्पादन की तुलना में बहुत तेज दर से बढ़ रहा है। हालांकि, यह ध्यान देने योग्य बात है कि भारतीय वाणिज्यिक पोल्ट्री क्षेत्र ने बैकयार्ड पोल्ट्री उत्पादन की तुलना में बहुत अधिक बुनियादी ढांचा हासिल किया है।

हाल के सरकारी आंकड़ों (20वीं पशुधन जनगणना) ने देश में बैकयार्ड कुक्कुट उत्पादन की जबरदस्त वृद्धि क्षमता का खुलासा किया। हालांकि, इसमें जाने के लिए इसे और अधिक लाभदायक उद्यम बनाने के लिए कुछ बाधाओं का सामना करना पड़ता है। यह लेख भारतीय बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग की विशेषताओं, कृषक समुदायों की आजीविका में मदद करने में इसकी भूमिका और बैकयार्ड पोल्ट्री उत्पादन में सुधार के लिए भविष्य की रणनीतियों के बारे में चर्चा करता है। यह अच्छी तरह से देखा जा सकता है कि मुर्गी पालन उद्योग में मुर्गी प्रमुख है जिसके बाद बत्तख का स्थान आता है। जबकि, अन्य पक्षी जैसे तुर्की, एमु, गिनी मुर्गी, बटेर आदि अभी भी आबादी और उपभोक्ताओं से परिचित होने के मामले में बहुत पीछे हैं।

भारतीय परिदृश्य में बैकयार्ड पोल्ट्री का महत्व

एक वाणिज्यिक ब्रॉयलर या अंडे देने वाली मुर्गी

कृषि विज्ञान केंद्र, अमिहित, जौनपुर, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

परियोजना में जाने की तुलना में बैकयार्ड पोल्ट्री फार्म शुरू करना बहुत आसान है। इसके लिए कम निवेश की आवश्यकता होती है और उचित प्रबंधन स्थितियों के साथ त्वरित परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। यह ग्रामीण लोगों की गरीबी उन्मूलन में सहायक है। यह उन्हें अंडे और मांस के मामले में उच्च गुणवत्ता वाले पशु प्रोटीन का एक सस्ता और अच्छा स्रोत प्रदान कर सकता है। इस उत्पादन प्रणाली के माध्यम से खाद्य सुरक्षा को अच्छी तरह से बनाए रखा जा सकता है। पिछवाड़े के प्रकार के लिए उपयोग की जाने वाली अधिकांश नस्लें दोहरे उद्देश्य वाली नस्लें हैं। वे अंडे दे सकते हैं और उच्च गुणवत्ता वाले मांस का काफी मात्रा में उत्पादन कर सकते हैं। रिपोर्टों से पता चलता है कि स्थानीय नस्लें मुश्किल से सालाना 60–80 अंडे देती हैं और पालन की इस प्रणाली में 12 महीनों में उनका वजन लगभग 1.2 से 1.3 किलोग्राम होता है। हालांकि, यह ध्यान देने योग्य बात है कि ग्रामप्रिया, ग्रामलक्ष्मी, नंदिनी, कृषिप्रिय आदि जैसे बैकयार्ड के पक्षियों की कुछ उन्नत नस्लें समान प्रबंधन प्रथाओं पर 120–150 अंडे उत्पादन करने में सक्षम हैं और कुछ 200–220 तक अच्छी तरह से रख सकते हैं। उदाहरण के लिए ग्रामप्रिया वार्षिक रूप से 220 अंडे का उत्पादन कर सकती है। अन्य उन्नत नस्लों के बीच अच्छी प्रबंधन स्थितियों के साथ जल्दी अंडे देने की उम्र के साथ और 3–4 महीनों के भीतर 1.25 किलोग्राम तक वजन हो सकता है। ऐसी नस्लों के मांस की गुणवत्ता भारत के उपभोक्ताओं द्वारा अच्छी तरह से स्वीकार की जाती है और ब्रॉयलर की तुलना में अधिक पैसा प्राप्त करती है। हालांकि, ब्रॉयलर की तुलना में उन्हें उत्पादन करने में अधिक समय लगता है।

बैकयार्ड कुक्कुट पालन बनाम निजी क्षेत्र कुक्कुट व्यवसाय

विभिन्न रिपोर्टों से पता चलता है कि बैकयार्ड मुर्गी उत्पादन के नस्ल, फीड, बर्तन, पशुपालन प्रथाओं और विपणन प्रणालियों में काफी सुधार हुआ है, हालांकि, कॉरपोरेट पोल्ट्री उद्योग के साथ पिछवाड़े के पोल्ट्री की तुलना करना आसान नहीं है। वे बहुत अलग हैं। वहां उत्पादन प्रणालियां एक दूसरे के बहुत विपरीत हैं। बैकयार्ड मुर्गी पालन का उद्देश्य मूल रूप से छोटे किसानों के लिए है, जिनके पास घर के पीछे छोटी जगह है जहां वे अपने घरेलू उपभोग के लिए कुछ पक्षियों को रख सकते हैं और कुछ को कभी–कभार बेच सकते हैं। जबकि, निजी क्षेत्र का लक्ष्य सीमित समय के भीतर बड़ी संख्या में पक्षियों का उत्पादन करना है। रिपोर्टों से पता चलता है कि 95 प्रतिशत से अधिक पोल्ट्री बाजार पर निजी क्षेत्रों का कब्जा है। बहरहाल, पोल्ट्री उत्पादन की बैकयार्ड प्रणाली ने गरीब किसानों की उल्लेखनीय मदद की है।

अनुबंध खेती निजी क्षेत्र के कुक्कुट उत्पादन के अधिक केंद्र में है, जिसमें पोल्ट्री उद्योग की बड़ी कंपनियां किसानों के साथ कानूनी रूप से अनुबंध करती हैं। ऐसी खेती में, किसान से श्रम के साथ–साथ भवन, बर्तन और पानी की सुविधा प्रदान करने की अपेक्षा की जाती है और कंपनी समय पर जर्मप्लाज्म, चारा, स्वास्थ्य देखभाल सुविधाएं, विशेषज्ञ पर्यवेक्षण और विपणन सुविधाएं प्रदान करती है। पक्षियों के प्रति किलो शरीर के वजन को बढ़ाने के लिए किसानों को आमतौर पर कुछ पैसे के रूप में आय प्राप्त होती है। कुछ लोग मानते हैं कि ऐसी बड़ी कंपनियां ऐसे व्यवसाय से भारी मुनाफा कमाती हैं और किसानों को कम आय मिलती है, हालांकि, यह एक शोध योग्य और बहस का मुद्दा हो सकता है। लेकिन, दूसरी ओर, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि इस प्रणाली ने लंबे समय में बड़े स्तर पर किसानों को लाभ प्रदान किया है। तालिका 1 पिछवाड़े और निजी क्षेत्र के कुक्कुट उत्पादन के बीच एक संक्षिप्त वर्णनात्मक अंतर प्रदान करती है।

सरकारी नीतियां

कई सरकारी एजेंसियां और एनजीओ ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षित करने में मदद करने के लिए आ रहे हैं, बैकयार्ड पोल्ट्री उद्यम शुरू करने के लिए विभिन्न सुविधाएं प्रदान करते हैं ताकि वे इससे काफी आय अर्जित कर सकें। विभिन्न कार्यक्रमों और योजनाओं के माध्यम से भारत के आर्थिक रूप से गरीब लोगों को कभी–कभी और कुछ बर्तनों के साथ चूजे, चारा, कुछ दवाएं भी प्रदान की जाती हैं। उदाहरण के लिए, भारत सरकार ने डी०ए०एच०डी० की 2013–2014 की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण पिछवाड़े पोल्ट्री विकास कार्यक्रम नामक एक योजना के तहत गरीबी रेखा से नीचे (बीपीएल) के 6.13 लाख लोगों की मदद की। यह सुनने में कम लग सकता है लेकिन भारत के कृषक समुदाय पर इसका बहुत बड़ा प्रभाव है। समान

तालिका 1: पिछवाड़े और निजी क्षेत्र के कुक्कुट उत्पादन प्रणाली के बीच संक्षिप्त वर्णनात्मक अंतर

मापदंड	पिछवाड़े कुक्कुट उत्पादन	निजी क्षेत्र कुक्कुट उत्पादन
पक्षियों के प्रकार	अधिकतर स्थानीय नस्लें	अत्यधिक विशिष्ट नस्लें
मांस हेतु पक्षियों की बिक्री आयु	1.2 किलो तक पहुंचने में लगभग 12 महीने	30 दिनों में 30 दिनों में ब्रॉयलर का विपणन किया जा सकता है, जिसका वजन लगभग 1.3 किग्रा हो जाता है
उत्पादन	कमतर उत्पादन क्षमता	उच्च उत्पादन क्षमता
आवास की जरूरत	केवल जीवन निर्वाह लायक	उत्पादन की जरूरतों के अनुसार अत्यधिक नियंत्रित
भोजन की आदत	ज्यादातर खोजकर चुगना, कुछ रसोई का कचरा, कभी–कभी फ़ीड की पूरकता	उत्पादन और शरीर की मांगों को पूरा करने के लिए विशिष्ट भोजन
स्वचालन	ना के बराबर	उच्च स्वचालन
स्वास्थ्य सुविधाएं	ना के बराबर	उचित और अनुसूचित स्वास्थ्य उपाय
आय उपार्जन	कमतर	अधिक
लागत	कमतर	अधिक लागत की आवश्यकता
किसान के प्रकार	ज्यादातर गरीब और छोटे किसान	बड़े किसान जिनके पास अधिक जमीन हो
खाद्य सुरक्षा	पर्याप्त	विचारणीय
बाजार का बुनियादी ढांचा	अव्यवस्थित	व्यवस्थित

नीतियों और कार्यक्रमों के माध्यम से, विभिन्न गरीब ग्रामीण लोगों को अपनी आर्थिक और सामाजिक स्थिति विकसित करने के लिए लाभान्वित किया जाता है।

पिछवाड़े किए गए कुक्कुट पालन की बाधाएं

विभिन्न अध्ययनों को संदर्भित करने से अनुमान आधारित विचार प्राप्त करने पर, यह पाया गया कि जरूरी नहीं कि आरोही या अवरोही क्रम में, पिछवाड़े के झुंड में रोग का प्रकोप (खराब स्वास्थ्य देखभाल सुविधाएं), देशी नस्लों का खराब उत्पादन प्रदर्शन, अंडों की कम हैचबिलिटी, प्रारंभिक बाल मृत्यु दर, जर्मप्लाज्म की खराब उपलब्धता, वित्त पोषण के स्रोतों की कमी, तकनीकी ज्ञान की कमी, उच्च फीड लागत, खराब बाजार संरचना, और शिकारी हमले दूसरों के बीच प्रमुख बाधाएं हैं। इसके अलावा, लोगों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति भी पिछवाड़े के कुक्कुट उत्पादन को प्रभावित करती है। इसके अलावा, शैक्षिक पृष्ठभूमि और प्राप्त प्रशिक्षणों का देश के विभिन्न क्षेत्रों में गोद लेने और पिछवाड़े पोल्ट्री उत्पादन के प्रसार पर भी प्रभाव पड़ता है।

बेहतर बैकयार्ड पोल्ट्री के लिए भविष्य की रणनीतियाँ

बेहतर बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग के लिए एकल योजना उपयुक्त नहीं हो सकती है। इसे खेती के सभी घटकों को उचित और सहक्रियात्मक तरीके से काम करने की आवश्यकता है। इसके लिए बैकयार्ड पोल्ट्री उत्पादन के हर पहलू को रणनीतिक तरीके से करना होगा। निम्न सुधार पक्षियों के प्रदर्शन को बढ़ाने में सहायक हो सकते हैं–

- स्वास्थ्य देखभाल रखरखाव का प्राथमिक ज्ञान रखने वाले विभिन्न क्षेत्रों के लिए प्रशिक्षित लोगों के समूहों की एक श्रृंखला विकसित करना पहला कदम हो सकता है।
- बेहतर नस्ल का परिचय और विभिन्न स्थानों पर उनकी उपलब्धता
- नाममात्र की ब्याज दरों पर वित्त पोषण स्रोतों के रूप में सरकार या गैर सरकारी संगठन की भूमिका
- सुदूर क्षेत्रों के लिए छोटे पैमाने की हैचरी की स्थापना
- तकनीकी ज्ञान के प्रसार के लिए प्रशिक्षण
- विशिष्ट क्षेत्रों में एक हैचरी और आम फीड मिलिंग सुविधा
- बैकयार्ड पोल्ट्री उत्पादों के लिए बाजार के बुनियादी ढांचे का विकास करना
- आवास, भरण–पोषण, बाड़ा बनाने आदि सहित बेहतर पशुपालन पद्धतियां।

केंचुआ स्नान (वर्मी वाश) : एक तरल जैविक खाद

सुरेन्द्र प्रताप सोनकर*, सुरेश कुमार कन्नौजिया** एवं राजीव कुमार सिंह***

ताजा वर्मीकम्पोस्ट व केंचुए के शरीर को धोकर जो पदार्थ तैयार होता है उसे वर्मीवाश कहते हैं। यह भिन्न–भिन्न स्थानों पर विभिन्न संस्थाओं/व्यक्तियों द्वारा अलग–अलग विधियां अपनायी जाती हैं, मगर सबका मूल सिद्धान्त लगभग एक ही है। विभिन्न विधियों से तैयार वर्मीवाश में तत्वों की मात्रा व वर्मीवाश की सांद्रता में अन्तर हो सकता है। इसे प्राकृतिक जैव कीटनाशक के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। वर्मीवाश में घुलनशील नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश मुख्य पोशक तत्व है।

वर्मी वाश का सिद्धांतः

वर्मी वाश मूलतः केंचुओं के पसीना और मूत्र को एकत्र करने की पद्धति है। 30 दिन तक केंचुए बाल्टी में सतत उपर से नीचे चालान करते हैं। सामान्य तौर पर केंचुए रात में भोजन लेंने के लिए उपर आते हैं एवं दिन में नीचे चले जाते हैं। इस तरह केंचुओं के लगातार चालान से कम्पोस्ट के बेड में बारीक–बारीक नलिकाएं बन जाती हैं। केंचुए जब इन नलिकाओं से होकर गुजरते है तब केंचुओं के शरीर के उपर सतह से निकलने वाला स्त्राव जिसे मूत्र अथवा पसीना कहा जा सकता है, वह इन नलिकाओं में चिपक जाता है। जब उपर से डाला गया बूंद–बूंद पानी इन नलिकाओं में से होकर गुजरता है तब वह केंचुओं द्वारा निष्कासित स्राव को धोते हुए निकलता है। इस तरह जो पानी नीचे एकत्र होता है उसमें केंचुए के पसीने अथवा मूत्र का मिश्रण होता है।

वर्मी वाश तैयार करने हेतु उपयोगी सामग्रीः

गोबर, मिट्टी, मोटी बालू, केंचुआ, मिटटी का घड़ा या बाल्टी या ड्रम ईंट के छोटे टुकड़े या गिट्टी आदि।

वर्मी वाश का उपयोगः

वर्मी वाश एक बहुत ही अच्छा पोषक द्रव्य है। इसमें पौधे के लिए उपयुक्त सभी सूक्ष्म पोषक तत्व उपयुक्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं। इसी के साथ वर्मी वाश में हामोन्स तथा एन्जाईम्स भी होते हैं जो फूलों एवं फलों के विकास में वृद्धि करते हैं। वर्मी वाश विशेषतः फल–फूल एवं सब्जियों के पौधों के लिए बहुत उपयोगी है। वर्मी वाश की प्रकृति गोमूत्र की तरह तीव्र है। अतः कम से कम 20 भाग पानी में मिलाकर ही उसका छिड़काव करना चाहिए। इस तरह पौधे के आसपास गोलाई में कम से कम आधा लीटर पानी मिलाया हुआ वर्मी वाश डालाा जाता है।

वर्मी वाश के छिड़काव से न सिर्फ पौधों की वृद्धि अच्छी होती है बल्कि कीट नियंत्रण भी होता है। वर्मी वाश का प्रयोग किसी भी फसल पर किया जा सकता है, परन्तु बहुत छोटे रोपों पर इसका उपयोग न करें, क्योंकि उनके जल जाने का डर है। वर्मी वाश की मात्रा तीव्र होने से भी पौधे जल जाते हैं। अतः उचित मात्रा में पानी मिलाकर ही वाश का उपयोग करें। वर्मी वाश का अच्छी तरह उपयोग करने से रासायनिक खाद की जरूरत नहीं पडती है।

वर्मी वाश का उपयोगः–

1. 1 लीटर वार्मी वाश को 5–6 लीटर ताजा पानी में मिलाकर सभी पौधों पर शाम के समय छिडकाव करें।
2. वर्मी वाश का उपयोग सब्जी वाली फसलों पर अच्छी गुणवत्ता युक्त उत्पादन प्राप्त करने के लिए 1 लीटर वर्मी वाश में 3–4 लीटर में मिलाकर छिड़काव करे।
3. गर्मी वाली सब्जियों में शीघ्र फूल एवं फलन के लिए भी पत्तियों पर वर्मी वाश का छिड़काव किया जा सकता है।

वर्मी वाश छिड़काव के समय सावधानियांः–

1. वर्मीवाश का छिड़काव सम्भव हो तो शाम को 3 बजे के बाद करें।
2. वर्मीवाश एवं पानी के घोल का अनुपात उचित होना चाहिए।
3. फसली पर वर्मीवाश का छिड़काव हमेशा हवा के दिशा में ही करें।
4. वर्मीवाश का छिड़काव पौधों या फसलों पर यदि

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृ.प्रसार), **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, ***विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान) कृषि विज्ञान केन्द्र, बक्शा, जौनपुर–प्रथम

बारिश होने की सम्भावना हो, तो न करें।

वर्मी वाश के लाभः—

1. वर्मी वाश के प्रयोग से फसलों की वृद्धि एवं उत्पादन क्षमता अच्छी होती है।
2. वर्मी वाश के प्रयोग से पर्यावरण स्वस्थ बना रहता है।
3. वर्मी वाश के प्रयोग से मृदा की भैतिक संरचना में सुधार होता है।
4. वर्मी वाश के प्रयोग से मृदा की जल ग्रहण क्षमता बढ़ जाती है।
5. वर्मी वाश के प्रयोग से गुणवत्ता युक्त उत्पादन होता है।

वर्मी वाश कैसे बनाएं (साधारण) :

जिस तरह केंचुओं का मल (विष्ठा) खाद के रूप में बहुत असरकारक होता है, उसी तरह इसका मूत्र भी तरल खाद के रूप में उपयोग होता है। केंचुओं के मूत्र को इकट्ठा करने की एक विशेष पद्धति होती है जिसे वर्मी वाश पद्धति कहते हैं। वर्मी वाश बनाने के लिए 40 लीटर की प्लास्टिक की बाल्टी अथवा केन लेकर उसे निम्न प्रकार से भरा जाता है। बाल्टी में नीचे एक छोटा छेद करते हैं जिससे वर्मी वाश एकत्र किया जाता है।

1. इंट के छोटे टुकड़े या छोटे—छोटे पत्थर — 5 इंच भर दें / परत
2. रेत मोटी बालू — 2 इंच भर दें / परत
3. मिट्टी — 3 इंच भर दें / परत
4. पुराना खाद / गोबर — 9—12 इंच भर दें
5. घास का आवरण — 1—1.5 इंच भर दें

इस तरह बाल्टी को भरकर उसमें करीब 200 से 300 केंचुए छोड़ देते हैं। वर्मी वाश की बाल्टी छायादार जगह में रखी जाती है। रोज इसमें हल्का—हल्का पानी छिड़कते रहना चाहिए। 30 दिनों तक बाल्टी के नीचे के छिद्र को अस्थाई रूप से बन्द कर दिया जाता है। 30 दिन के बाद इस छिद्र को खोल कर उसके नीचे एक बरतन रखा जाता है, जिसमें वर्मी वाश एकत्र होता है। वर्मी वाश की बाल्टी में 4—6 घंटे के अन्तर पर दिन में करीब 4 से 5 बार हल्के—हल्के पानी का छिड़काव किया जाता है। बाल्टी के छिद्र के नीचे के साफ बर्तन में बूंद—बूंद वर्मीवाश / पानी एकत्र होता रहेगा।

बनाने की प्रक्रिया (विस्तृत)

वर्मीवाश इकाई बड़े बैरल / ड्रम, बड़ी बाल्टी या मिट्टी के घड़े का प्रयोग करके स्थापित की जा सकती है। प्लास्टिक, लोहे या सीमेन्ट के बैरल प्रयोग किये जा सकते हैं, जिसका एक सिरा बन्द हो और दूसरा सिरा खुला हो। सीमेंट का बड़ा पाईप भी प्रयोग किया जा सकता है। इस पाईप को एक ऊंचे आधार पर खड़ा रखकर नीचे की तरफ से बन्द करें। नीचे की तरफ आधार के पास साईड में छेद (1 इंच चौड़ा) करें। इस छेद में T पाईप डालकर वाशर की मदद से सील करें। अन्दर की ओर आधा इंच पाईप रखें तथा बाहर इतना कि नीचे बर्तन आसानी से रखा जा सकें। बाहर T पाईप के छेद में नल फिट करें तथा दूसरे छेद में नट लगायें जो कि पाईप की समय—समय पर सफाई के काम आएगा। यह पल सुविधानुसार बैरल की पेंदी में भी लगाया जा सकता है।

लगभग 16 दिन बाद जब इकाई तैयार हो जाए, नल को बंद करके पांच लीटर क्षमता का एक बर्तन, जिसमें नीचे बारीक सुराख हों, इकाई के उपर लटका दें, ताकि बूंद—बूंद पानी नीचे गिरे। यह पानी धीरे—धीरे कम्पोस्ट के माध्यम से गुजरता है और ताजा वर्मीकम्पोस्ट से तत्व लेकर अपने साथ घोल लेता है। साथ ही केंचुओं के शरीर को धोकर भी पानी गुजरता है। नल को अगले दिन वर्मीवाश एकत्रित करने के लिए खोल लिया जाए। इसके बाद नल को बन्द कर दिया जाए तथा ऊपर वाले बर्तन में पानी भर दिया जाए ताकि उसी प्रकार वर्मीवाश एकत्रित करने की प्रक्रिया चलती रहे। इकाई को उपर से बोरी वगैरह से ढककर रखना चाहिए।

इकाई की ऊपरी सतह पर एकत्रित वर्मी कम्पोस्ट को समय—समय पर बाहर निकाला जा सकता है तथा गोबर व अवशेष डाले जा सकते हैं या जब तक पूरा बैरल भर न जाए इसी प्रकार उपर फसल अवशेष डालते रहें तथा उसके बाद कम्पोस्ट को निकालकर दोबारा से सामग्री भरे। वर्मीवाश को इसी स्वरूप में स्टोर किया जा सकता है या धूप में सांद्रीकरण करके स्टोर कर सकते हैं। प्रयोग के समय इसमें पानी मिलाया जा सकता है।

अधिक आय के लिए करें सूअर पालन

राहुल कुमार सिंह, श्रीप्रकाश सिंह एवं नरेन्द्र रघुबंशी

सूअर पालन एक ऐसा व्यवसाय है जिससे रोजगार के साथ–साथ अतिरिक्त आर्थिक लाभ भी अर्जित किया जा सकता है। सूअर पालन भारत में बहुत से लोगों की आमदनी का अच्छा स्त्रोत रहा है, इसलिए सूअर पालन व्यसायिक दृष्टि से भारतीय लोगों के लिए कृषि से जुड़े व्यवसायों में अच्छा एवं लाभदायक विचारों में से एक हो सकता है। माँस उत्पादन की दृष्टि से वैश्विक स्तर पर सूअरों की अनेक अच्छी नस्लें पायी जाती हैं। इनमें से कुछ ऐसी नस्लें है जो भारत के जलवायु के अनुकूल हैं, जिनका सूअर पालन के लिए उद्यमी किसी भी अच्छी नस्ल का चयन करके सूअर पालन शुरू कर सकता है। हालांकि, भारत में कुछ वर्ष पहले तक सूअर पालन व्यवसाय को निम्न दृष्टि से देखा जाता था इसलिए समाज में इस व्यवसाय की अच्छी छवि नहीं थी। लेकिन वर्तमान में सम्पूर्ण परिदृश्य बदलता जा रहा है। इसलिए भारत में इस तरह का यह व्यवसाय केवल आर्थिक रूप से किसी एक वर्ग विशेष तक ही सीमित नहीं रह गया है। भारत में उत्तर प्रदेश सबसे बड़ा सूअर उत्पादन राज्य है।

सूअर पालन के लाभ

सूअर पालन के विभिन्न फायदे निम्न हैं–

- सूअर किसी भी अन्य जानवर की तुलना में तेजी से बढ़ता है एवं अन्य जानवरों की तुलना में जल्दी परिपक्व हो जाते हैं। एक मादा सूअर 8– 9 महीनों की उम्र में पहली बार माँ बन सकती है। वे साल में दो बार बच्चे पैदा कर सकते हैं और प्रत्येक प्रसूति में वे 8–12 बच्चों को जन्म देते हैं।
- सूअरों की फ़ीड रूपांतरण दक्षता बहुत अधिक होती है, तात्पर्य कि उनमें फ़ीड से मांस की रूपांतरण दर बाकी जानवरों की तुलना बहुत बेहतर होता है। वे किसी भी प्रकार के फ़ीड, फोरेज, मिलों से प्राप्त कुछ अनाज उप–उत्पाद, क्षतिग्रस्त फीड्स, मांस के उप–उत्पाद, कचरा आदि को मूल्यवान, पौष्टिक और स्वादिष्ट मांस में बदल सकते हैं। सूअर अनाज, क्षतिग्रस्त भोजन, चारा, फल, सब्जियां, कचरा, गन्ने आदि सहित लगभग सभी प्रकार के भोजन खा सकते हैं। कभी–कभी वे घास और अन्य हरे पौधों या जड़ों को भी खा सकते हैं।
- सूअर कृषि व्यवसाय स्थापित करना आसान है, और इसके लिए घर के निर्माण और उपकरण खरीदने के लिए छोटे पूंजी/निवेश की ही आवश्यकता है।
- कुल उपभोज्य मांस का अनुपात और कुल शरीर का वजन सूअरों में अधिक है। हमें सूअर से लगभग 60 से 80 प्रतिशत उपभोग्य मांस मिल सकता है। सूअर मांस सबसे पौष्टिक और स्वादिष्ट मांस में से एक है। इसमें वसा और ऊर्जा अधिक तथा पानी कम होता है।
- सूअर खाद एक अच्छा और व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाने वाला उर्वरक है। आप इसे खेत में दोनों फसलों के उत्पादन के लिए और तालाब में मछली खेती के उद्देश्य के लिए उपयोग कर सकते हैं।
- सूअर की वसा की पोल्ट्री फीड, पेंट्स, साबुन और रासायनिक उद्योगों में भी भारी मांग है। और यह मांग लगातार बढ़ रही है।
- सूअर मांस की भारत में अच्छी घरेलू मांग है, और उसके अलावा आप विदेशी देशों में बेकन, हैम, लार्ड, पोर्क, सॉस आदि जैसे सूअर उत्पादों का निर्यात करके अच्छी आय भी कमा सकते हैं।
- सूअर कृषि व्यवसाय छोटे और भूमिहीन किसानों, बेरोजगारों, शिक्षित या अशिक्षित युवा लोगों के लिए और ग्रामीण महिलाओं के लिए आय का एक महान अवसर हो सकता है।

सुअर पालन के लिए चारा

सुअर को जौ, मक्का, गेहूं, ज्वार, चावल तथा बाजरा खिला सकते हैं। इसके अलावा इनकी प्रोटीन सप्लीमेंट के तौर पर आइल केक, मीट मील तथा फिश मील को अनाज में मिलाकर खिला सकते हैं।

सुअर पालन के लिए कितना चारा खिलाए

सुअर को उनके वजन के हिसाब से अनाज दिया जाता है. 25 किलोग्राम से 100 किलोग्राम तक सुअर को 2 से 5 किलो तक अनाज खिलाया जाता है. वहीं 100 से 250 किलोग्राम के वयस्क सुअर को 5 से 8.5 किलोग्राम अनाज रोजाना दिया जाता है।

कृषि विज्ञान केंद्र, कल्लीपुर, वाराणसी–221307

सुअर पालन से कमाई

यदि आप कमर्शियल सुअर पालन करना चाहते हैं, तो 10+1 का फार्मूला अपनाएं. यानी 10 फीमेल और एक मेल सुअर का पालन करें. विदेशी नस्ल का सुअर साल 16 महीनों में दो बच्चों को जन्म देती है. वहीं यह एक बार में 8 से 12 बच्चों को जन्म देती है. यदि 10 मादा सुअर आपके पास है और हर एक ने एक बार में 8 से 10 बच्चों को भी जन्म दिया, तो 16 महीने में यह 160 से 200 बच्चों को जन्म दे देती है. एक वयस्क सुअर लगभग 10 से 15 हजार रूपए में बिकता है. इस लिहाज से आप साल भर में ही खर्च निकालकर 8 से 12 लाख की कमाई कर सकते है।

सूकर की नस्लें

हमारे देश में शूकरों की देसी और संकर दोनों नस्लें पाई जाती है। लेकिन, अधिक लाभ और व्यावसायिक उत्पादन के लिए संकर नस्लों का ही चुनाव करें। संकर नस्लों में सफेद यॉर्कशायर, लैंडरेस, हैम्पशायर, ड्युरोक और घुंघरू प्रमुख हैं।

घुंघ

यह भारत की देसी नस्ल है। यह भारत में पूर्वोत्तर राज्यों में सबसे अधिक पाई जाती है। इस नस्ल के शावक तेजी से विकास करते हैं। इस नस्ल का रंग काला और चमड़ी मोटी होती है। खासकर बंगाल में इसका पालन किया जाता है। इसकी वृद्धि दर बहुत अच्छी है। क्योंकि इसे पालने के लिए कम से कम प्रयास करने पड़ते हैं और यह प्रचुरता में प्रजनन करता है। सूकर की इस संकर नस्ल/प्रजाति से उच्च गुणवत्ता वाले मांस की प्राप्ति होती है और इनका आहार कृषि कार्य में उत्पन्न बेकार पदार्थ और रसोई से निकले अपशिष्ट पदार्थ होते हैं। घुंगरू सूकर प्रायः काले रंग के और बुल डॉग की तरह विशेष चेहरे वाले होते हैं। इसके 6–12 से बच्चे होते हैं जिनका वजन जन्म के समय 1.0 kg तथा परिपक्व अवस्था में 7.0–10.0 kg होता है। नर तथा मादा दोनों ही शांत प्रवृत्ति के होते हैं और उन्हें संभालना आसान होता है। प्रजनन क्षेत्र में वे कूडे में से उपयोगी वस्तुएं ढूंढने की प्रणाली के तहत रखे जाते हैं तथा बरसाती फ़सल के रक्षक होते हैं।

सफेद यॉर्कशायर

यह नस्ल भारत में सबसे अधिक पाई जाती है। इस नस्ल का रंग सफेद होता है। प्रजनन के मामले में, ये उन्नत नस्ल है। ये नस्ल एक बार में 6–7 शावकों को जन्म देती है। इस नस्ल के नर सूकरों का वजन 300–400 किलो और मादा सूकर का वजन 230–320 किलो तक होता है।

सूअर के स्टार्टर, ग्रोअर और फिनिशर आहार

स्टार्टर राशन	ग्रोअर राशन	फिनिशर राशन
मक्का–60 %	मक्का–64 %	मक्का–60 %
खल–20 %	खल–15 %	खल–10 %
चोकर–10 %	चोकर–12.5 %	चोकर–24.5 %
मछली चूर्ण–8 %	मछली चूर्ण –6 %	मछली चूर्ण –3 %
मिनरल मिक्सचर–1.5 %	मिनरल मिक्सचर–2.5 %	मिनरल मिक्सचर–2.5 %
नमक–0.5 %	नमक–0.5 %	नमक–0.5 %

नोट– ग्रोअर सूअर को प्रतिदिन शरीर वजन का 4 प्रतिशत या 1.5–2 किलोग्राम दाना आवश्यकतानुसार दें।

लैंडरेस

इस नस्ल का रंग सफेद होता है। इसके कान और नाक लंबे होते हैं। प्रजनन के मामले में ये नस्ल भी अच्छी है। एक मादा सूकर एक बार में औसतन 4 से 6 बच्चों को जन्म देती है। इस नस्ल के नर शावकों का वजन 270 से 360 किलो तक होता है, जबकि मादा 200 से 320 किलो तक होती है।

हैम्पशायर

इस नस्ल के सूकर मध्यम साइज के होते हैं। इनका शरीर गठा हुआ और रंग काला होता है। मांस के व्यवसाय के लिए ये नस्ल अच्छी होती है। इस नस्ल के मादा एक बार 5–6 बच्चों को जन्म देती है।

दैनिक आहार की मात्राः

- ग्रोअर सूकर (26 से 45 किलो तक): प्रतिदिन शरीर वजन का 4 प्रतिशत अथवा 5 से 2.0 किलो दाना मिश्रण।
- ग्रोअर सूकर (वजन 12 से 25 किलो तक): प्रतिदिन शरीर वजन का 6 प्रतिशत अथवा 1 से 5 किलो ग्राम दाना मिश्रण।
- फिनसर पिगः 5 किलो दाना मिश्रण।
- दुधाः सूकरीः 10 किलो और दूध पीने वाले प्रति बच्चे 200 ग्राम की दर से अतिरिक्त दाना मिश्रण। अधिकतम 5.0 किलो।
- दाना मिश्रण को सुबह और अपराहन में दो बराबर हिस्से में बाँट कर खिलायें। गर्भवती एवं दूध देती सूकरियों को भी फिनिशर राशन ही दिया जाता है।

कम लागत प्राकृतिक खेती के आयाम

प्रवेश कुमार*, शेष नारायण सिंह** एवं ओम प्रकाश***

अन्धाधुन्ध रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, खरपतवार तथा फफूँद नाशियों के प्रयोग और घटते कार्बनिक खादों के प्रयोग से मृदा की उर्वरा शक्ति में कमी, पर्यावरण प्रदूषण तथा स्वाथ्य सम्बन्धी गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। साथ ही साथ बढ़ती लागत, बाजार पर निर्भरता तथा उपज का उचित दाम न मिलने के कारण खेती घाटे का सौदा बनी हुई है। अब आवश्यकता है खेती की ऐसी पद्धति की जिसमें खेती की उत्पादन लागत घटे, मृदा उपजाऊ बनी रहे, उत्पादन में वृद्धि हो, मनुष्य निरोगी रहे। वह है प्राकृतिक खेती।

प्राकृतिक खेती को रासायन मुक्त खेती के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें पौधों के लिये पोषक तत्वों से लेकर फसल को कीटों एवं रोगों से बचाने के लिए देशी गाय के गोबर, मूत्र तथा अन्य सामग्री से तैयार प्राकृतिक आदानों का प्रयोग किया जाता है। कृषि–पारिस्थितिकी में अच्छी तरह से आधारित यह एक विविध कृषि प्रणाली है जो फसलों, पेड़ों और पशुधन को एकीकृत करती है जिससे कार्यात्मक जैव विविधता के इष्टतम उपयोग की सुविधा मिलती है।

प्राकृतिक खेती मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि,पर्यावरण संरक्षण, जल की बचत, उपज में वृद्धि, बेहतर स्वास्थ्य तथा पशुधन का प्रयोग करते हुये फसल उत्पादन लागत कम करके किसानों की आय बढ़ाने का मजबूत आधार प्रदान करती है। प्राकृतिक खेती प्राकृतिक प्रक्रियाओं पर आधारित है जो खेतों में या उसके आसपास मौजूद होती हैं। प्राकृतिक खेती के प्रमुख घटक बीजामृत, जीवामृत, घन जीवामृत, अच्छादन, वाफसा, बहुफसली फसल चक्र, नीमास्त्र, ब्राम्हस्त्र तथा दशपर्णी अर्क आदि।

बीजामृतः बीजामृत का प्रयोग बीजों को उपचारित करने के लिए करते हैं। इसके प्रयोग से बीजों की अंकुरण क्षमता में वृद्धि होती है और साथ ही साथ बीज जनित रोगों से भी बचाव होता है।

बनाने एवं प्रयोग की विधिः 5 किलोग्राम देशी गाय का गोबर, 5 लीटर देशी गाय का मूत्र, 50 ग्राम खाने वाला चूना, जंगल, बगीचे या पेड़ के नीचे की एक मुट्ठी (100 ग्राम) मिट्टी जँहा रासायनिक उर्वरकों और अन्य रासायनों का प्रयोग न हुआ हो, को 20 लीटर पानी में अच्छी तरह घोल कर 24 घंटे के लिये छायादार स्थान पर जूट के बोरे से बर्तन का मुँह ढक कर रख दें और सुबह –शाम लकड़ी से अच्छी तरह घोलें। ध्यान रहे धान एवं गेहूं जैसे मोटे छिलका वाले बीजों के लिए चूना का प्रयोग करें तथा कोमल एवं पतले छिलके वाले बीजों जैसे मूँग, सरसों इत्यादि के लिए चूने का प्रयोग ना करें, तैयार बीजामृत में 100 किलोग्राम बीज को उपचारित करके छाँव में सुखाकर शाम के समय बुवाई करें। नर्सरी को (पैधे का जड़ भाग) बीजामृत में 20 मिनट डुबो कर रोपाई करें।

जीवामृतः जीवामृत एक उत्प्रेरक का कार्य करता है जिससे सूक्ष्मजीवों की संख्या एवं उनकी क्रियाशीलता में वृद्धि होती है इसके अलावा जीवामृत पौधों को कवक एवं जीवाणु जनित रोगों से भी बचाता है साथ ही साथ पौधों को पोषक तत्व उपलब्ध कराता है।

बनाने एवं प्रयोग की विधिः 10 किलोग्राम देशी गाय का गोबर,10 लीटर देशी गाय का मूत्र,1 किलोग्राम गुड़ या गन्ने का रस,1 किलोग्राम बेसन, जंगल, बगीचे या पेड़ के नीचे की एक मुट्ठी (100 ग्राम) सूक्ष्मजीव युक्त मिट्टी जँहा रासायनिक उर्वरकों और अन्य रासायनों का प्रयोग न हुआ हो, को एक ड्रम में 200 लीटर पानी में अच्छी तरह खोलें और फिर ड्रम को जूट की बोरी से ढक कर छाया में 48 घण्टे के लिए रख दें तथा घोल को सुबह–शाम डंडे से चलाते रहें। जीवामृत 48 घंटे में बनकर तैयार हो जाता है लेकिन सर्दियों में 4 दिन का समय लगता है। तैयार जीवामृत को छानकर 7 दिन के अंदर प्रयोग कर लें। अच्छी तरह तैयार 200 लीटर जीवामृत को एक एकड़ खेत में पानी के साथ बहा दें या टपक विधि से पानी के साथ दें। छिड़कवा विधि में 10 लीटर जीवामृत को 100

*विषय वस्तु विशेषज्ञ मृदा विज्ञान, **विषय वस्तु विशेषज्ञ कृषि प्रसार, ***वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष कृषि विज्ञान केंद्र, सिद्धार्थनगर
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ0 प्र0)–224229

लीटर पानी में घोलकर 200 लीटर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। प्रत्येक फसल में 5 से 6 छिड़काव अवश्य करें। गन्ना जैसी बड़ी फसलों में 20 लीटर जीवामृत 100 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। पहला छिड़काव बुवाई के एक महा बाद, दूसरा छिड़काव 21 दन बाद, तीसरा और चौथा छिड़काव 21–21 के अंतराल पर छिड़काव करें। फलदार वृक्षों पर प्रति महा एक छिड़काव करते तथा 2 से 4 लीटर जीवामृत प्रत्येक पेंड़ के थाला में डालते हैं।

घन जीवामृतः घन जीवामृत जीवामृत का सूखा रूप है जिसका प्रयोग खाद के साथ करते हैं।

बनाने एवं प्रयोग की विधिः 100 किलोग्राम गोबर, 1 किलोग्राम गुड़, 1 किलोग्राम बेसन तथा 100 ग्राम सूक्ष्म जीवों युक्त मिट्टी को 5 लीटर गोमूत्र में अच्छी तरह मिलाएं और इसे 48 घंटे के लिए बोरी में ढककर छांव में रख दें। इसके बाद छाया में सुखाकर बारीक करके बोरी में भरकर रख लें। अच्छी तरह तैयार घन जीवामृत 6 माह तक प्रयोग कर सकते हैं। या 200 किलोग्राम ताजा गाय के गोबर को सुखाकर 20 लीटर जीवामृत में मिलाकर 2 दिन तक छाया में रखते हैं। तैयार घनजीवामृत को महीन करके बुवाई के समय या खेत की सिचाई करने के तीन दिन बाद 2–3 कुंतल प्रति एकड़ की दर से प्रयोग करें।

अच्छादनः मिट्टी में उपस्थित केंचुआ और सूक्ष्मजीवों की संख्या में वृद्धि और कार्य करने के लिए अनुकूल पर्यावरण एवं नमी को संरक्षित करने के लिए अच्छादन का प्रयोग किया जाता है मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवों एवं फसलों के समुचित विकास के लिए 25 से 32 डिग्री सेल्सियस तापमान 65 से 72 प्रतिशत नमी और मृदा की सतह पर अंधेरा आवश्यक है। मृदा को जब फसल अवशेषों या अन्य पदार्थ से अच्छादित करते हैं तो अनुकूल वातावरण का निर्माण होता है भूमि से नमी की हानि नहीं होता है और सूक्ष्मजीवों द्वारा अच्छादित पदार्थ अपघटित मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ाता साथ ही साथ मृदा में उपस्थित लाभकारी जीवों की क्रियाशीलता में भी वृद्धि होती है। मृदा को सजीव और निर्जीव आच्छादन द्वारा ढका जा सकता है। सजीव अच्छादन में दलहनी फसलों या सघन फसलों के द्वारा भूमि को अच्छादित किया जा सकता है निर्जीव अच्छादन में फसल अवशेषों या अन्य पदार्थों के द्वारा भूमि को आच्छादित किया जाता है।

वाफसाः फसलों की जड़ें पानी को घूम से सीधे जल के रूप में नहीं लेती हैं बल्कि वाफसा के रूप में लेती हैं। फसलों की बुवाई बेड पर करनी चाहिए और नालियों के द्वारा सिंचाई करनी चाहिए जिससे समय और पानी दोनों की बचत होती है।

सहफसली फसल चक्रः मिश्रित फसल चक्र अपनाने से फसलों की जड़ें सहअस्तित्व के आधार पर रोगों और कीटों से बचाव तथा वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक पोषक तत्व, प्रकाश, जल, स्थान आदि का बंटवारा कर लेती हैं। एक दल वाली फसलों के साथ दो– दल वाली फसलें, दलहनी फसलों के साथ अनाज और तिलहनी फसलें, गन्ने के साथ प्याज एवं सब्जियां, गहरी जड़ वाली फसलों के साथ उथाली जड़ वाली फसलें, पेड़ों की छाया में हल्दी, अदरक, अरवी जैसी छाया सहनशील फसलों की बुवाई करें।

फसल सुरक्षाः फसालों को कीट एवं रोगों से बचाने के लिए प्राकृतिक खेती में रासायनों का प्रयोग वर्जित है। कीटों के नियंत्रण के लिए नीमास्त्र, अग्निस्त्र, ब्राम्हस्त्र, दशपर्णी अर्क और मट्ठा एवं पानी के घोल को फफूँद नाशक के रूप में प्रयोग करते है।

नीमास्त्रः नीमास्त्र का प्रयोग सभी फसलों में रस चूसने वाले कीटों/छोटी सुंडी/इल्लियों के नियंत्रण के लिए प्रयोग करते हैं।

बनाने एवं प्रयोग की विधिः 5 किलोग्राम नीम के पत्ते या फलों को अच्छी तरह कूटकर 100 पानी में मिलायें इसके बाद 5 लीटर देशी गाय का मूत्र और 1 किलो देशी गाय का गोबर मिलायें। मिश्रण को छायादार स्थान पर जूट के बोरे से ढककर 48 घंटे के लिए रख दें और सुबह शाम मिश्रण को लकड़ी की सहायता से चलाएं। तैयार नीमस्त्र को कपड़े से छानकर 6 से 8 लीटर प्रति 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ की फसल पर छिड़काव करें। अच्छी तरह तैयार नीमास्त्र 6 माह तक प्रयोग कर सकते हैं

अग्नि अस्त्रः अग्नि अस्त्र का प्रयोग सभी फसलों में रस चूसने वाले कीटों/छोटी सुंडी/इल्लियों के नियंत्रण के लिये प्रयोग करते हैं।

बनाने एवं प्रयोग की विधिः नीम के पत्ते या फल 5 किलोग्राम कूटकर, तंबाकू पाउडर 500 ग्राम, 500 ग्राम तीखी हरी मिर्च की चटनी तथा 500 ग्राम लहसुन की

चटनी को 20 लीटर देशी गाय के मूत्र में मिलाकर धीमी आंच पर उबाल आने तक उबालें, मिश्रण को छायादार स्थान पर 48 घंटे के लिए रखें और सुबह शाम डंडे से चलाते रहें। तैयार अग्नि अस्त्र को कपड़े से छानकर 6 से 8 लीटर 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ की दर से फसल पर छिड़काव करें। अच्छी तरह तैयार अग्नि अस्त्र का 3 माह तक प्रयोग कर सकते हैं।

ब्राम्हस्त्रः ब्रह्मास्त्र का प्रयोग बड़ी सुंडियों एवं इल्लियों के नियंत्रण के लिए करते हैं।

बनाने एवं प्रयोग की विधिः नीम के पत्ते या फल 5 किलोग्राम अच्छी तरह कूटकर, 2—2 किलोग्राम अमरूद, पपीता, आम तथा अरंडी के पत्तों को पीसकर चटनी बना लें को 10 लीटर देशी गाय के मूत्र में मिलाकर धीमी आंच पर एक उबाल आने तक उबालें, इसके बाद मिश्रण को 48 घंटे के लिए ठंडा होने के लिए रख दें। तैयार ब्रह्मास्त्र को कपड़े से छानकर ढाई से तीन लीटर प्रति 100 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। तैयार ब्रह्मास्त्र का प्रयोग 6 माह तक किया जा सकता है।

दशपर्णी अर्कः दशपर्णी अर्क का प्रयोग सभी फसलों में सभी प्रकार की सुंडियों एवं इल्लियों के नियंत्रण के लिए किया जाता है।

बनाने एवं प्रयोग की विधिः देशी गाय का गोबर 2 किलोग्राम, नीम, करंज, अरण्डी, सीताफल, बेल, गेंदा, तुलसी, धतूरा, आम, मदार, अमरुद, अनार, करेला, गुड़हल, कनेर, अर्जुन, हल्दी, अदरक, पपीता इनमें से किन्ही 10 की 2—2 किलोग्राम पत्तियां को कूटकर चटनी बना लें, 500 ग्राम हल्दी पाउडर, 500 ग्राम अदरक की चटनी, 10 ग्राम हींग पाउडर, 1 किलो तंबाकू, 1 किलो हरी मिर्च की चटनी तथा 1 किलो लहसुन की चटनी को 200 लीटर पानी में लकड़ी की सहयता से अच्छी तरह घोलें तथा घोल को जुट की बोरी से ढककर छायादार स्थान पर 30 से 40 दिन तक रखें तथा सुबह—शाम लकड़ी से घोलते रहें, तैयार दशपार्णी अर्क को कपडे से छानकर 6 लीटर प्रति 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ की फसल पर छिड़काव करें। दशपार्णी अर्क 6 माह तक भण्डारण करके प्रयोग कर सकते हैं।

(पृष्ठ 18 का शेष)

पाइका —

पक्षियों की यह प्रवृत्ति होती है कि वे उपभोग के लिए अनुपयुक्त सामग्री, जैसे पंख, लिट्टर की सामग्री, धागे आदि को खाना शुरू कर देते हैं। यह आमतौर पर आधुनिक पोल्ट्री फार्म में कम पाया जाता है। फॉस्फोरस की कमी, परजीवी संक्रमण, नई लिट्टर सामग्री आदि पक्षियों को पाइका के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

निवारण (रोकथाम) एवं प्रबंधन —

पाइका की रोकथाम के लिए उचित प्रबंधन और संतुलित आहार की सलाह दी जाती है। पोल्ट्री पोषण में कैल्शियम और फास्फोरस आवश्यक तत्व हैं। फीड में फॉस्फोरस और कैल्शियम का स्तर बढ़ाएं। बहुत अधिक कैल्शियम युक्त आहार 18 सप्ताह से कम उम्र के युवा चूजों और बढ़ते पक्षियों के लिए एक गंभीर समस्या हो सकती है। इनके लिए कैल्शियम का अनुशंसित स्तर 1 प्रतिशत या उससे कम है। ओएस्टर शैल और चूना पत्थर दोनों ही अंडे देने वाली मुर्गियों के आहार में कैल्शियम की आपूर्ति करने में समान रूप से अच्छी तरह से काम करते हैं। आटे के रूप में कैल्शियम कार्बोनेट खिलाने से मुर्गियों का स्वाद कम हो सकता है और इसके परिणामस्वरूप फीड की खपत में कमी आने की संभावना हो जाती है।

निष्कर्ष —

- जिन पक्षियों में असामान्य व्यवहार विकसित हो जाता है, उनकी समय पर देखभाल की जानी चाहिए।
- पक्षियों की नियमित चोंच काटना (डीबीकिंग) एक आवश्यक प्रबंधन अभ्यास है।
- पर्याप्त पोषक तत्व जैसे कैल्शियम, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम आदि अनुपूरण प्रदान करें।
- चोटों का उपचार धीरे—धीरे किया जाना चाहिए।
- इन कुछ सामान्य हस्तक्षेपों से पोल्ट्री फार्म में होने वाले आर्थिक नुकसान को काफी हद तक कम किया जा सकता है और किसानों के लिए उद्यम को अधिक टिकाऊ और लाभदायक बनाया जा सकता है।

सफलता की कहानी

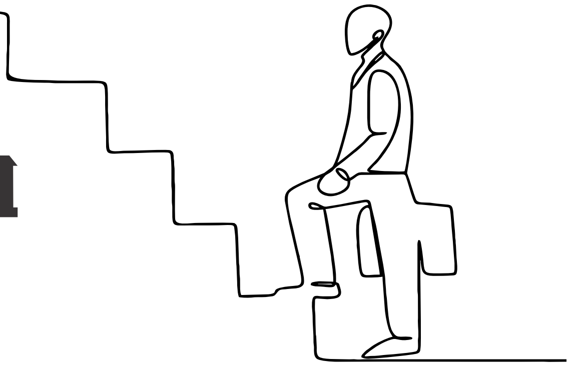

आसिफ अजीज को जरबेरा ने किया मालामाल

विनय कुमार, राम भरोसे एवं के.एम. सिंह

कृषक का नाम	: **आसिफ अज़ीज़ सिद्दीकी**
पिता का नाम	: **स्व. श्री अज़ीजुर्रहमान सिद्दीकी**
ग्राम	: **नंदई डीह**
तहसील	: **चमरपुरवा**
जिला	: **श्रावस्ती**
मोबाइल	: **9844224486 / 7044635232**

- **भूमि उपलब्धताः** 5 एकड़
- **विशेषताः** जरबेरा पुष्प स्ट्रॉबेरी ,गुलाब की खेती तथा टमाटर की खेती

विवरण	**कुल आय (रू0 / हे0)**	**शुद्ध आय (रू0 / हे0)**
फसलें	—	—
बागवानी	32 लाख	24 लाख
पशुपालन	—	—
योग	32 लाख	24 लाख

फसलें / इकाईः

- जरबेरा —1 एकड़
- स्ट्रॉबेरी —1 एकड़
- गुलाब —1 एकड़
- टमाटर—1 एकड़
- **कृषि एवं संबद्ध गतिविधियों में सफलता प्राप्त करने से पहले किसान की प्रारंभिक स्थितिः** पहले है धान की खेती से लगभग 4 लाख की आय होती थी फिर के.वी.के. भिनगा के प्रोत्साहन से तथा गोष्ठियों (ट्रेनिंग एवं वैज्ञानिकोंके मार्गदर्शन में बाग़बानी शुरू किया।
- **कृषि एवं संबद्ध गतिविधियों में सफलता प्राप्त करने के बाद किसान की स्थितिः** बाग़बानी में सफलतापूर्वक कार्य एवं के वी के भिनगा के निर्देशन से अब लगभग 24 लाख प्रति वर्ष की आय होती है।

उपलब्धियाँ :

- बाग़बानी से लगभग 24 लाख प्रति वर्ष की आय। इस वर्ष जरबेरा के लिए एक नए पॉलीहॉउस की योजना है।
- वर्ष 2023 में किसान सम्मान दिवस के अवसर पर माननीय राज्यपाल, श्रीमती आनन्दी बेन पटेल द्वारा संरक्षित खेती हेतु राज्य स्तर पर पुरस्कार प्राप्त हुआ।
- वर्ष 2023 में कृषि जागरण द्वारा मिलियनेयर फार्मर ऑफ़ इंडिया का पुरस्कार प्राप्त हुआ।
- **मूल्य संवर्धन, अतिरिक्त आय, लिंग सशक्तिकरण, नवाचारः** हिमाचल प्रदेश से गर्म वातावरण के सेब तथा पुणे से स्टॉबेरी की पौध लाकर नवाचार, आना मे मुल्य संवर्धन करके अतिरिक्त आय, महिलाओं को बाग़बानी का प्रशिक्षण देकर बाग़बानी में दक्ष बनाने का कार्य , आस पास के गांव के लोगो को फूलों की खेती का प्रशिक्षण देकर फूलों की खेती में रुचि पैदा करने का कार्य।

आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रोद्योगिक विश्विद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

दिसम्बर माह में किसान भाई क्या करें

फसलों में

डॉ. आर.आर. सिंह

अपर निदेशक प्रसार/प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)

(1) समय से बोये गये गेहूँ में पहली सिंचाई ताजमूल अवस्था में 20–25 दिन पर करें।

(2) गेहूँ में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार के नियंत्रण के लिए 675 ग्राम 2,4 डी सोडियम सॉल्ट 80 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण तथा गेहूँसा के लिए 75 प्रतिशत आइसोप्रोट्यूरान 1.50 किग्रा को 600 से 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर चपटे नॉजिल वाले स्प्रेयर से बुवाई के 30–35 दिन पर छिड़काव करें।

(3) चना, मटर तथा मसूर में 45–60 दिन पर सिंचाई करें।

(4) लाही में दाना पड़ने पर तथा राई में फूल आने की अवस्था पर सिंचाई करें।

सब्जी एवं उद्यान में

अश्वनी कुमार सिंह

विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान)

(1) नवम्बर के अन्तिम सप्ताह में हल्की सिंचाई के बाद फूलगोभी एवं पातगोभी में नत्रजन की आधी मात्रा डालकर मिट्टी चढ़ा दें।

(2) नवम्बर के प्रथम पखवारे में जो आलू बोये गये हैं उसमें माह के प्रथम पक्ष मे हल्की सिंचाई करके नत्रजन की आधी मात्रा देकर मिट्टी चढ़ा दें।

(3) नवम्बर में डाली गयी पूसा रेड या नासिक रेड प्याज की पौध की रोपाई माह के दूसरे पक्ष में 15 गुणा 10 सेमी की दूरी पर 20 टन सड़ी गोबर की खाद तथा 50:50:80 ना.फा.पो. प्रति हेक्टेयर डालकर करें।

(4) नये बागों में थालों की निराई–गुड़ाई करके उचित नमी बनाये रखने के लिए 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहें। पाला से बचाने के लिए घास–फूस की ठठरी बनाकर तीन तरफ से ढक दें।

(5) अंगूर की बाग लगाने के लिए पंक्ति से पंक्ति तथा पौधे से पौधे की दूरी 2–3 मीटर रखकर 60 गुणा 60 गुणा 60 सेमी आकार के गड्ढे खोद लें। गड्ढों को 15–20 दिन खुला छोड़ने के बाद खाद तथा मिट्टी को समान मात्रा में 50–100 ग्राम बीएचसी तथा 0.5 से 1 किग्रा सुपरफास्फेट डालकर सिंचाई करें

पौध संरक्षण

डॉ. वी. पी. चौधरी एवं डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक (पादप रोग)

(1) तिलहन में झुलसा एवं सफेद गेरुई रोग के नियंत्रण के लिये जिंक कार्बामेट की 2 किग्रा मात्रा 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

(2) आलू तथा टमाटर में पिछेती झुलसा रोग के नियंत्रण के लिए मैंकोजेब 2.5 किग्रा मात्रा को 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

(3) आम एवं कटहल के पौधों में मिलीबग के नियंत्रण के लिए तने की एक मीटर ऊँचाई तक 30 सेमी चौड़ी तथा 400 गेज मोटी पॉलीथीन की पट्टी बाँधकर किनारे पर मिट्टी या ग्रीस से चिपका दें।

पशुपालन

डॉ. सुरेन्द्र सिंह

विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान)

(1) सर्दी का मौसम भैंस के लिए गर्भाधान हेतु उत्तम होता है। अतः मादा भैंसों में गर्भाधान हेतु उत्तम नस्ल के नर भैंसों का प्रयोग करें।

(2) प्रत्येक पशुपालक को दुधारू पशुओं तथा उनकी संतति के उत्तम रख–रखाव हेतु खिड़कियों एवं

संकलनकर्ता : डॉ. अनिल कुमार विषय वस्तु विशेषज्ञ, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

दरवाजों पर टाट अथवा बोरे के पर्दे लगाना चाहिए तथा बाँधने वाले स्थान पर पुआल का बिछावन प्रयोग करें।

(3) भेड़ों और बकरियों में प्रसूति काल चल रहा है इस पर विशेष ध्यान रखा जाये।

(4) भैसों में इस समय दूध उत्पादन का सर्वोत्तम काल चल रहा है। अतः इस समय थनैला रोग लगने की संभावना रहती है। अतः उनके थन को हमेशा स्वच्छ रखें तथा चोट आदि से बचाव किया जाय तथा उनका दूध यथा शीघ्र पूरी मात्रा में निकाल लिया जाय।

(5) अधिक अण्डा उत्पादन बनाए रखने हेतु अनुत्पादक मुर्गियों की छँटनी कर दिया जाय।

(6) ब्रायलर पालक एक दिवसीय चूजों की ब्रूडिंग पर विशेष ध्यान देकर तापमान का उचित निर्धारण करें जिससे सर्दी से होने वाली मृत्यु को रोका जा सके तथा खिड़कियों पर टाट अथवा बोरे का पर्दा लगाकर सदी से बचाव करें।

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : आलू की फसल में कौन–कौन से रोग लगते हैं? (श्री राम भरोसे, जगदीशपुर, अमेठी)

उत्तर : आलू की फसल में मुख्यता अंगमारी काला कोढ़, जीवाणुज, मृदु गलन, सामान्य स्कैब, मोजैक, लीफ रोल आदि लगते हैं। आलू में बुवाई 40 दिन बाद प्रायः अगेती अंगमारी का आक्रमण होता है। पत्तियों पर काले धब्बे जिनमें चूड़ीदार गड़रियाँ (रिंग) दिखाई पड़ती हैं। प्रकोप अधिक होने पर कई धब्बे आपस में मिलकर विकराल रूप धारण कर लेती हैं। पिछेती अंगमारी (झुलसा) देर से आरम्भ होती है। दिसम्बर या जनवरी के महीने में जब तापमान नीचे जाता है और नमी 60 प्रतिशत से अधिक हो जाती है एवं आकाश में बादल छाये रहते हैं या हल्की वर्षा होती रहती है ऐसी अवस्था में यह रोग भयंकर रूप धारण करता है। पत्तियों पर नोक या किनारे से जल सिक्त धब्बे बनते हैं और अनुकूल वातावरण होने पर सम्पूर्ण पौधा तीन–चार दिन में समाप्त हो जाता है। ऐसे समय वर्षा होने से मिट्टी कन्दों पर से हट जाता है और बीमारी का आक्रमण कन्दों तक हो जाता है जिसके कारण कन्दों के ऊपर कत्थई रंग के धब्बे बनते हैं।

प्रश्न : बटेर मुर्गियाँ अण्डा कब देना शुरू करती हैं तथा साल में कितने अण्डे देती हैं?

(श्री अनिल कुमार, तिरहुत, सुल्तानपुर)

उत्तर : बटेर मुर्गियाँ छः सप्ताह की आयु में अण्डा उत्पादन करने योग्य हो जाती हैं। इनसे 6–7 सप्ताह की आयु में 50 प्रतिशत तथा 6–10 सप्ताह की आयु में 80 प्रतिशत अण्डा उत्पादन किया जा सकता है। अच्छी देखभाल करके बटेर से 250–300 अण्डे प्रति वर्ष प्राप्त किया जा सकता है। अण्डे का औसत भार 11 ग्राम होता है।

प्रश्न : प्रायः खेतों में आलू के कन्द गलने लगते हैं क्या करना चाहिए?

(श्री श्याम कुमार, खण्डासा, जनपद अयोध्या)

उत्तर : इसमें कन्द का विगलन होता है। यह गलन फसल की खुदाई के समय दिखाई पड़ती है। यदि अन्य निकटवर्ती कन्द गलने लगें तो यह जीवाणु मृदु गलन का सूचक है। बोने से पहले कटे पिटे कन्दों को कभी भी प्रयोग में न लायें साथ ही बीजोपचार करना न भूलें। जिस खेत में पहले वाली फसल में यह बीमारी आई हो उसमें फिर फसल न लें।

पंजीयन संख्या - 54461/91 डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्ज़ियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषकः
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से डॉ. आर.आर. सिंह अपर निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित